khan global studies

MPPSC MAINS –INDIAN POLITY UNIT – 02

Shubham tripathi

PREVIOUS YEAR PAPER

- **नीति आयोग के मार्गदर्शक सिद्धान्तों पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए। Write a short note on the guiding principles of NITI Ayog.**
- **भारत में चुनाव सुधारों की आवश्यकता, उपाय और चुनौतियों पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये। Write a short note on need, measures and challenges of Electoral Reforms in India. (15)**

- **भारतीय चुनाव आयोग के कर्तव्यों एवं कार्यों का संक्षिप्त विवरण दीजिए। Write a brief description of the duties and functions of Election Commission of India.**
- **राष्ट्रीय जनजाति आयोग की संरचना और शक्तियों को स्पष्ट कीजिए।Elucidate briefly the composition and powers of National Commission for Scheduled Tribes**

- **"क्या निर्वाचन आयोग निष्पक्ष और स्वतंत्र संस्था है?" | "Election Commission is impartial and independent institution?"**
- **निर्वाचन सुधार हेतु मान्य किए गए कुछ प्रमुख सुझायों को अंकित कीजिए। Enumerate some of the adopted suggestions for Electoral Reforms.**

- **भारतीय निर्वाचन व्यवस्था की कतिपय कमियों को निर्दिष्ट कीजिए। Identify the few shortcomings of the election system in India. (3)**
- **भारतीय संविधान के अनुच्छेद 312 में क्या प्रावधान किया गया है? | What has been provided in Article 312 of the Indian Constitution? (3)**

- **भारतवर्ष में नागरिक सेवकों के लिए शीर्षस्थ प्रशिक्षण संस्थान कहाँ स्थापित है? तथा उसका नाम क्या है? | Where is the Apex Civil Servants Training Academy in Indin und what is its name?**
- **भारतीय प्रशासनिक सेवा (IAS) की प्रमुख विशेषताएं लिखिए। Write down salient features of the Indian Administrative Service (15)**

- **संघ लोक सेवा आयोग के कार्यों का उल्लेख कीजिए तथा आयोग के सदस्यों की स्वतंत्रता की सुरक्षा हेतु कौन-कौन से संवैधानिक प्रावधान किए गए हैं। Write down the functions of Union Public Service Commission along with Constitutional provisions to safeguard the independence of its members? (15)**
- **नागरिक सेवकों को प्राप्त संवैधानिक सुरक्षा उपायों तथा उसके महत्त्व की संक्षेप में व्याख्या कीजिए Discuss briefly the Constitutional safeguards provided to civil servants and its significance (6)**

- **अखिल भारतीय सेवा श्रेणियाँ कितनी हैं? इनके नाम लिखिये How many All India Service Cadres are there? Write their names (3)**
- **मध्य प्रदेश लोक सेवा आयोग के कोई दो दायित्व लिखिये Write any two duties of the M.P. Public Service Commission (3)**

- **Comptroller & Auditor General की निष्पक्षता व स्वायत्तता हेतु कोई भी दो संवैधानिक रक्षा कवच लिखिये। Write any two constitutional safeguards for the autonomy and impartiality of Comptroller & Auditor General.**
- **राज्य में उच्च स्तरीय लोक सेवकों के प्रशिक्षण प्रणाली का विवेचन कीजिए तथा इस क्षेत्र में सुधार के लिए संक्षिप्त में सुझाव लिखिए Explain the training system of higher Civil Services in your state and offer a few suggestions to bring reforms in this field. (15)**

भारत निर्वाचन आयोग
Election Commission of India

भारत निर्वाचन आयोग

अन्य नाम- चुनाव आयोग, व एक स्वायत्त संवैधानिक निकाय है,जो भारत में संघ और राज्य चुनाव प्रक्रियाओं का control करता है।

यह देश में लोकसभा, राज्यसभा, राज्य विधानसभाओं, राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के चुनाव का संचालन करता है।

भारतीय संविधान का भाग 15 चुनावों से संबंधित है जिसमें चुनावों के संचालन के लिये एक आयोग की स्थापना करने की बात कही गई है।

चुनाव आयोग की स्थापना 25 जनवरी, 1950 को संविधान के अनुसार की गई

संविधान के अनुच्छेद 324 से 329 तक चुनाव आयोग और सदस्यों की शक्तियों, कार्य, कार्यकाल, पात्रता आदि से संबंधित हैं।

भारत के प्रथम चुनाव आयुक्त सुकुमार सेन थे।

संविधान में चुनावों से संबंधित अनुच्छेद

- 324- चुनाव आयोग में चुनावों के लिये निहित दायित्व: अधीक्षण, निर्देशन और नियंत्रण।
- 325- धर्म, जाति या लिंग के आधार पर किसी भी व्यक्ति विशेष को मतदाता सूची में शामिल न करने और इनके आधार पर मतदान के लिये अयोग्य नहीं ठहराने का प्रावधान।
- 326- लोकसभा एवं प्रत्येक राज्य की विधानसभा के लिये निर्वाचन वयस्क मताधिकार के आधार पर होगा।
- 327- विधायिका द्वारा चुनाव के संबंध में संसद में कानून बनाने की शक्ति।
- 328- किसी राज्य के विधानमंडल को इसके चुनाव के लिये कानून बनाने की शक्ति।
- 329- चुनावी मामलों में अदालतों द्वारा हस्तक्षेप करने के लिये बार (BAR)

By Shubham Tripathi Sir

निर्वाचन आयोग की संरचना

- निर्वाचन आयोग में केवल एक चुनाव आयुक्त का प्रावधान था, लेकिन राष्ट्रपति की एक अधिसूचना के ज़रिये 16 अक्तूबर, 1989 को इसे तीन सदस्यीय बना दिया गया।
- फिर एक सदस्यीय आयोग बनाया और 1 अक्तूबर, 1993 को तीन सदस्यीय आयोग बनाया। तब से निर्वाचन आयोग में एक मुख्य चुनाव आयुक्त और दो चुनाव आयुक्त होते हैं।
- निर्वाचन आयोग का सचिवालय नई दिल्ली में स्थित है।

निर्वाचन आयोग की संरचना

मुख्य निर्वाचन अधिकारी IAS रैंक का अधिकारी होता है, जिसकी नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है तथा चुनाव आयुक्तों की नियुक्ति भी राष्ट्रपति ही करता है।

इनका कार्यकाल 6 वर्ष या 65 वर्ष की आयु (दोनों में से जो भी पहले हो) तक होता है।

इन्हें भारत के सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के समकक्ष दर्जा प्राप्त होता है और समान वेतन एवं भत्ते मिलते हैं।

मुख्य चुनाव आयुक्त को संसद द्वारा सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश को हटाने की प्रक्रिया के समान ही पद से हटाया जा सकता है।

आदर्श चुनाव आचार संहिता-

भारतीय निर्वाचन आयोग की आदर्श चुनाव आचार संहिता राजनीतिक दलों एवं प्रत्याशियों के लिए बनायी गयी एक नियमावली है, जिसका पालन चुनाव के समय आवश्यक है।

चुनाव आयोग द्वारा इसके लागू और समाप्त होने की घोषणा की जाती है।

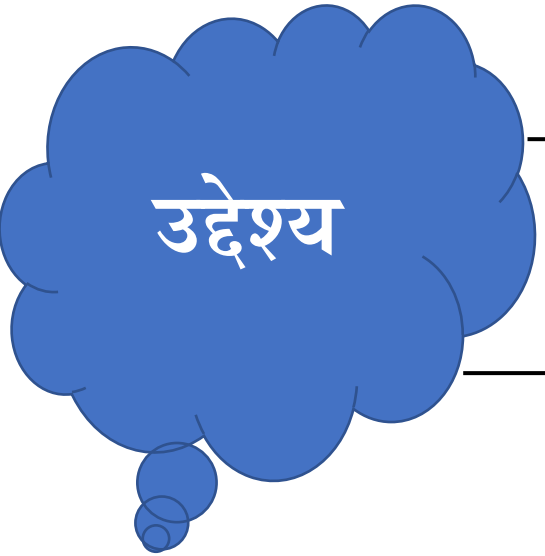

- सरकार में रहने वाले सत्ताधारी दल को चुनाव के दौरान सरकार में रहने का कोई लाभ प्राप्त न हो।
- सभी लोगों को चुनाव में समान अवसर प्रदान करना ।

हटाने की प्रक्रिया

- उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों, मुख्य चुनाव आयुक्त, नियंत्रक और महालेखा परीक्षक को दुर्व्यवहार या पद के दुरुपयोग का आरोप सिद्ध होने पर या अक्षमता के आधार पर संसद द्वारा अपनाए गए प्रस्ताव के माध्यम से ही पद से हटाया जा सकता है।
- निष्कासन के लिये दो-तिहाई सदस्यों के विशेष बहुमत की आवश्यकता होती है और इसके लिये सदन के कुल सदस्यों का 50 प्रतिशत से अधिक मतदान होना चाहिये।
- उपरोक्त पदों से किसी को हटाने के लिये संविधान में 'महाभियोग' शब्द का उपयोग नहीं किया गया है।
- महाभियोग शब्द का प्रयोग केवल राष्ट्रपति को हटाने के लिये किया जाता है जिसके लिये संसद के दोनों सदनों में उपस्थित सदस्यों की कुल संख्या के दो-तिहाई सदस्यों के विशेष बहुमत की आवश्यकता होती है और यह प्रक्रिया किसी अन्य मामले में नहीं अपनाई जाती।

चुनाव के प्रकार

- **आम चुनाव** - लोकसभा व राज्य विधान सभाओं के लिए प्रत्येक 5 वर्ष के पश्चात् होने वाले चुनावों को आम चुनाव कहा जाता है।

- **मध्यावधि चुनाव** - लोकसभा व राज्य विधान सभाओं के निर्धारित अवधि से पूर्व भंग होने के पश्चात् होने वाले चुनावों को मध्यावधि चुनाव कहा जाता है।

- **उपचुनाव-** किसी भी संसद सदस्य तथा राज्य विधान मण्डल सदस्य की मृत्यु त्याग-पत्र या अयोग्य घोषित होने के कारण रिक्त होने वाले पद को भरने के लिए कराए गए चुनाव को उपचुनाव कहते है

- **स्नैप पोल-** संसद तथा राज्य विधानसभा को अचानक भंग करके कराए गए चुनावों को स्नैप पोल कहते हैं

निर्वाचन आयोग के कार्य

- निर्वाचन क्षेत्रों का परिसीमन करना।
- निर्वाचक नामावली तैयार करना।
- राजनीतिक दलों को मान्यता देना।
- राजनीति दलों को चुनाव चिन्ह प्रदान करना।
- राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, लोकसभा तथा राज्य विधानमंडलों के निर्वाचन का संचालन करना ।
- चुनाव में धांधली होने पर चुनाव रद्द करना ।
- उपचुनाव करवाना।

निर्वाचन आयोग की स्वतंत्रता

निर्वाचन आयोग के गठन के लिए संविधान में प्रावधान किया गया है। इसका गठन कार्यपालिका या विधायिका द्वारा नहीं किया गया है, इसलिय यह संवैधानिक निकाय है।

मुख्य निर्वाचन आयुक्त तथा अन्य निर्वाचन आयुक्तों की नियुक्ति राष्ट्रपति करता है।

निर्वाचन आयुक्त की नियुक्ति राष्ट्रपति के प्रसादपर्यन्त नहीं है।

मुख्य निर्वाचन आयुक्त को संसद द्वारा पारित संकल्प पर ही पद से हटाया जा सकता है।

मुख्य निर्वाचन आयुक्त को उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश की श्रेणी में रखा गया है।

मुख्य निर्वाचन आयुक्त तथा अन्य निर्वाचन आयुक्तों के पश्चात उनकी सेवा शर्तों में कोई लाभकारी परिवर्तन नहीं किया जा सकता।

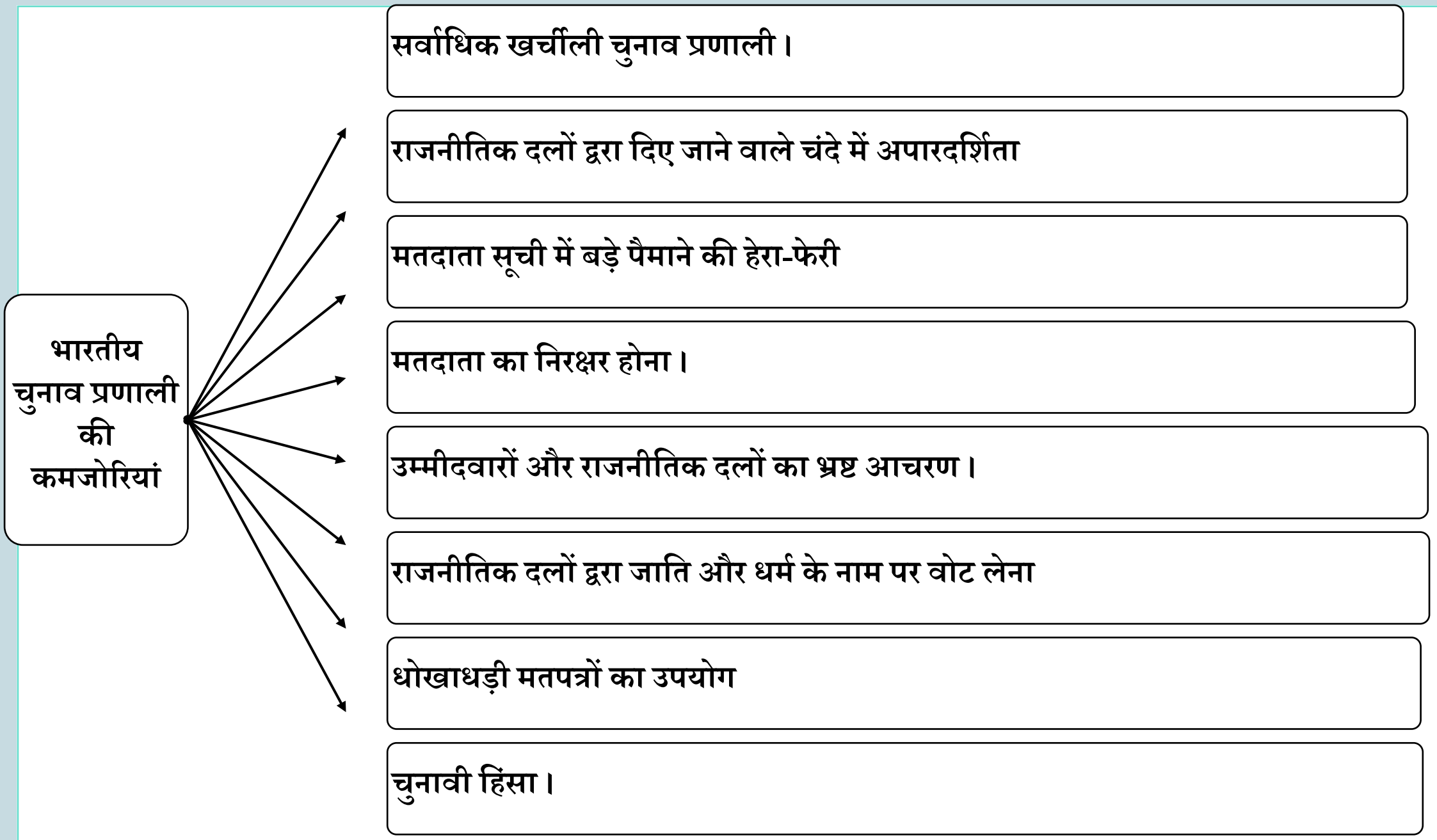

भारतीय चुनाव प्रणाली की कमजोरियां

- सर्वाधिक खर्चीली चुनाव प्रणाली।
- राजनीतिक दलों द्वरा दिए जाने वाले चंदे में अपारदर्शिता
- मतदाता सूची में बड़े पैमाने की हेरा-फेरी
- मतदाता का निरक्षर होना।
- उम्मीदवारों और राजनीतिक दलों का भ्रष्ट आचरण।
- राजनीतिक दलों द्वरा जाति और धर्म के नाम पर वोट लेना
- धोखाधड़ी मतपत्रों का उपयोग
- चुनावी हिंसा।

भारत निर्वाचन आयोग का महत्त्व

1) वर्ष 1952 से राष्ट्रीय और राज्य स्तर के चुनावों का सफलतापूर्वक संचालन व मतदान में लोगों की अधिक भागीदारी के लिये काम करता है।

2) राजनीतिक दलों को अनुशासित करना

3) चुनाव में समानता, निष्पक्षता, स्वतंत्रता स्थापित करता है।

4) मतदाता-केंद्रित और मतदाता-अनुकूल वातावरण की चुनावी प्रक्रिया में सभी पात्र नागरिकों की भागीदारी सुनिश्चित करता है।

5) चुनावी प्रक्रिया में राजनीतिक दलों और सभी हितधारकों के साथ संलग्न रहता है।

6) हितधारकों, मतदाताओं, राजनीतिक दलों, चुनाव अधिकारियों, उम्मीदवारों के बीच चुनावी प्रक्रिया और चुनावी शासन के बारे में जागरूक फैलाता है

निर्वाचन आयोग के समक्ष प्रमुख चुनौतियाँ

- आयोग को राजनीतिक दलों के वित्तीय खातों का लेखा-परीक्षण करने से रोका गया है।
- चुनाव आयुक्तों की नियुक्ति में बढ़ता राजनीतिक झुकाव भी निर्वाचन आयोग की निष्पक्षता पर प्रश्न चिन्ह लगाता है।
- अपराधियों को चुनाव लड़ने से रोकने के लिए अधिनियम कानूनों में स्पष्टता नहीं है। परिणामस्वरूप निर्वाचन आयोग सख्त कार्यवाही नहीं कर पाता है।
- निर्वाचन आयोग के पास स्वतंत्र सचिवालय नहीं है।
- विभिन्न राजनीतिक दलों में आन्तरिक लोकतंत्र का अभाव है।
- संविधान में निर्वाचन आयोग के सदस्यों की योग्यता भी निर्धारित नहीं है तथा इस बात का भी उल्लेख नहीं किया गया है कि अन्य निर्वाचन आयुक्तों का कार्यकाल कितना होगा ?
- निर्वाचन आयुक्तों की सेवानिवृत्ति के पश्चात् संविधान द्वारा अन्य नियुक्तियों पर रोक नहीं लगाई गई है।

निर्वाचन आयोग के निदेशक सिद्धांत

भारतीय संविधान के अनु. 324 के तहत निर्वाचन के संचालन निर्देशन व नियंत्रण की जिम्मेदारी निर्वाचन आयोग की है। सिद्धांत हैं :

- संविधान में दिये गये स्वतंत्रता, समानता व निष्पक्षता आदि मूल्यों को बनाए रखना।
- निर्वाचित सरकार के निरीक्षण, निर्देशन तथा नियंत्रण के लिए कानून का शासन बनाए रखना।
- चुनाव प्रक्रिया के आसान निर्वाहन के लिए श्रेष्ठ संरचना तैयार करना।
- चुनावी सेवाओं में प्रभावकारी तथा पेशेवर निष्पादन के लिए मानव संसाधन विकसित करना । सभी योग्य नागरिकों की चुनाव में भागीदारी सुनिश्चित करना।

भारत में निर्वाचन के संबंध में मुख्यत: दो प्रकार की पद्धतियां अपनायी गयी है।

निर्वाचन प्रणालियाँ

बहुलवादी / फर्स्ट पास्ट द पोस्ट प्रणाली

भारत में लोकसभा व राज्य विधानसभा के निर्वाचन हेतु इसी प्रणाली को अपनाया गया है।

इसके अंतर्गत पूरे देश को जनसंख्या के आधार पर निर्वाचन क्षेत्रों में विभाजित कर दिया जाता है।

एकल संक्रमणीय आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली

इस प्रणाली को भारत में राष्ट्रपति उपराष्ट्रपति, राज्यसभा व राज्य विधानपरिषद के निर्वाचन हेतु प्रयोग किया जाता है।

इस प्रणाली में सदस्यों के मत का मूल्य एक विधि द्वारा निर्धारित कर दिया जाता है।

एक्जिट पोल, ओपिनियम पोल व पोस्ट का लोकतंत्र में स्थान

- चुनाव पूर्व तथा मतदान पश्चात् विभिन्न संस्थाओं द्वारा जनता को सोच जानने हेतु विभिन्न पोल का आयोजन किया जाता है।

अर्थ :

- **ओपिनियन पोल :** चुनाव पूर्व विभिन्न प्रेक्षणों के माध्यम से चुनाव परिणामों का अनुमान लगाना।
- **एक्जिट पोल :** मतदान के पश्चात् पोलिंग बूथ से बाहर निकले हुए मतदाताओं की राय के माध्यम से चुनाव परिणामों का अनुमान लगाना।

एक्जिट पोल, ओपिनियम पोल व पोस्ट का लोकतंत्र में स्थान

- **पोस्ट पोल :** मतदान के एक दो दिन बाद मतदाताओं से अधिक सटीक जानकारी प्राप्त कर चुनाव परिणाम का अनुमान लगाना।

- **लोकतंत्र में स्थान**

1. सरकार पर जनता के विश्वास का परीक्षण।

2. जनता की राजनीतिक दलों के प्रति मंशा

3. राजनीतिक दलों की लोकप्रियता को मापना।

4. सरकार की कार्य प्रणाली जनता द्वारा मूल्यांकन। यद्यपि निर्वाचन आयोग द्वारा चुनाव पूर्व ओपिनियन पोल पर नियंत्रण लगा दिया गया है।

भारत का नियंत्रक और महालेखापरीक्षक (CAG-कैग)

भारत के नियंत्रक और महालेखापरीक्षक (Comptroller & Auditor General of India-CAG) भारत के संविधान के तहत एक स्वतंत्र प्राधिकरण है।

यह भारतीय लेखा परीक्षा और लेखा विभाग (Indian Audit & Accounts Department) का प्रमुख और सार्वजनिक क्षेत्र का प्रमुख संरक्षक है।

इस संस्था के माध्यम से संसद और राज्य विधानसभाओं के लिये सरकार और अन्य सार्वजनिक प्राधिकरणों (सार्वजनिक धन खर्च करने वाले) की जवाबदेही सुनिश्चित की जाती है और यह जानकारी जनसाधारण को दी जाती है।

भारत का नियंत्रक और महालेखापरीक्षक (CAG-कैग) भारत के संविधान का सबसे महत्त्वपूर्ण अधिकारी है। वह ऐसा व्यक्ति है जो यह देखता है कि संसद द्वारा मान्य खर्चों की सीमा से अधिक धन खर्च न होने पाए या संसद द्वारा विनियोग अधिनियम में निर्धारित मदों पर ही धन खर्च किया जाए।"

-डॉ. भीम राव अम्बेडकर

पृष्ठभूमि

महालेखाकार का कार्यालय वर्ष 1858 में स्थापित किया था, उसी वर्ष जब अंग्रेज़ों ने ईस्ट इंडिया कंपनी से भारत का प्रशासनिक नियंत्रण अपने हाथों में लिया।

वर्ष 1860 में सर एडवर्ड ड्रमंड को पहले ऑडिटर जनरल के रूप में नियुक्त किया। इसके बाद भारत के महालेखापरीक्षक को भारत सरकार का लेखा परीक्षक और महालेखाकार कहा जाने लगा।

वर्ष 1866 में पद नाम बदलकर नियंत्रक महालेखा परीक्षक कर दिया और वर्ष 1884 में इसे भारत के नियंत्रक और महालेखापरीक्षक के रूप में फिर से नामित किया गया।

भारत सरकार अधिनियम, 1919 के तहत महालेखापरीक्षक को सरकारी नियंत्रण से मुक्त कर दिया क्योंकि इस पद को वैधानिक दर्जा दिया।

भारत सरकार अधिनियम, 1935 ने संघीय ढाँचे में प्रांतीय लेखा परीक्षकों के लिये प्रावधान करके महालेखापरीक्षक के पद को और शक्ति दी।

इस अधिनियम में नियुक्ति और सेवा प्रक्रियाओं व महालेखापरीक्षक पद के कर्त्तव्यों का विवरण उल्लेख था

- वर्ष 1936 के लेखा और लेखा परीक्षा आदेश ने महालेखापरीक्षक के उत्तरदायित्वों और लेखा परीक्षा कार्यों के नियम बनाये।
- यह व्यवस्था वर्ष 1947 तक अपरिवर्तित रही। स्वतंत्रता के बाद भारतीय संविधान के अनुच्छेद 148 में भारत के राष्ट्रपति द्वारा एक नियंत्रक और महालेखापरीक्षक नियुक्त किये जाने का नियम जारी किया
- वर्ष 1958 में CAG के क्षेत्राधिकार में जम्मू और कश्मीर को शामिल किया।
- वर्ष 1971 में केंद्र सरकार ने नियंत्रक और महालेखापरीक्षक (कर्त्तव्य, शक्तियाँ और सेवा की शर्तें) अधिनियम, 1971 लागू किया।
- अधिनियम ने CAG को केंद्र और राज्य सरकारों के लिये लेखांकन और लेखा परीक्षा दोनों की ज़िम्मेदारी दी।
- वर्ष 1976 में CAG को लेखांकन के कार्यों से मुक्त कर दिया गया।

संवैधानिक प्रावधान

अनुच्छेद 148- CAG की नियुक्ति, शपथ और सेवा की शर्तों से संबंधित है।

अनुच्छेद 149- भारत के नियंत्रक और महालेखा परीक्षक के कर्त्तव्यों और शक्तियों से संबंधित है।

अनुच्छेद 150- संघ और राज्यों को खातों का विवरण राष्ट्रपति के अनुसार (CAG की सलाह पर) रखना होगा।

अनुच्छेद 151- संघ के खातों से संबंधित CAG की रिपोर्ट राष्ट्रपति को सौंपी जाएगी, जो संसद के प्रत्येक सदन के पटल पर रखी जाएगी।

संवैधानिक प्रावधान

- अनुच्छेद 279- 'शुद्ध आय' की गणना CAG द्वारा प्रमाणित की जाती है, जिसका प्रमाणपत्र अंतिम माना जाता है।
- तीसरी अनुसूची- भारत के संविधान की तीसरी अनुसूची की धारा IV भारत के CAG और सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों द्वारा पदभार ग्रहण के समय ली जाने वाली शपथ का प्रावधान करती है।
- छठी अनुसूची के अनुसार, ज़िला परिषद या क्षेत्रीय परिषद के खातों को राष्ट्रपति और CAG द्वारा अनुमोदित प्रारूप के अनुसार रखा जाना चाहिये।
- इन निकायों के खाते का लेखा-जोखा इस तरह से करना होगा जिस प्रकार CAG उचित समझता है और ऐसे खातों से संबंधित रिपोर्ट राज्यपाल को प्रस्तुत की जाएगी, जो विधानमंडल के समक्ष रखी जाती है।

संरचना

- नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक एकल सदस्यीय संस्था है।
- यह भारत के महालेखा परीक्षा विभाग का संवैधानिक प्रमुख होता है।
- इस विभाग के अन्य अधिकारी पूर्णत: कैग अधीनस्थ होते हैं।
- भारत के अन्य राज्यों में कैग के agent के रूप में कई अन्य अकाउंटेंट जनरल नियुक्त किए जाते हैं, जो राज्य सरकार के लेखाओं की जानकारी कैग को देते हैं

कैग की स्वायत्तता AUTONOMY

CAG की स्वतंत्रता की सुरक्षा के लिये संविधान में कई प्रावधान किये गए हैं।

CAG राष्ट्रपति की सील और वारंट द्वारा नियुक्त किया जाता है और इसका कार्यकाल 6 वर्ष या 65 वर्ष की आयु तक होता है। (दोनों में से जो भी पहले हो)

CAG को राष्ट्रपति द्वारा केवल संविधान में दर्ज प्रक्रिया के अनुसार हटाया जा सकता है जो कि सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश को हटाने के तरीके के समान है।

एक बार CAG के पद से सेवानिवृत्त होने/इस्तीफा देने के बाद वह भारत सरकार या किसी भी राज्य सरकार के अधीन किसी भी कार्यालय का पदभार नहीं ले सकता।

कैग की स्वायत्तता AUTONOMY

CAG का वेतन और अन्य सेवा शर्तें नियुक्ति के बाद (कम) नहीं की जा सकतीं।

उसकी प्रशासनिक शक्तियाँ और भारतीय लेखा परीक्षा और लेखा विभाग में सेवारत अधिकारियों की सेवा शर्तें राष्ट्रपति द्वारा उससे परामर्श के बाद ही निर्धारित की जाती हैं।

CAG के कार्यालय का प्रशासनिक व्यय, जिसमें सभी वेतन, भत्ते और पेंशन शामिल हैं, भारत की संचित निधि पर भारित होते हैं जिन पर संसद में मतदान नहीं हो सकता।

CAG के कार्य और शक्तियाँ (विभिन्न स्रोतों से ऑडिट करने के अधिकार)

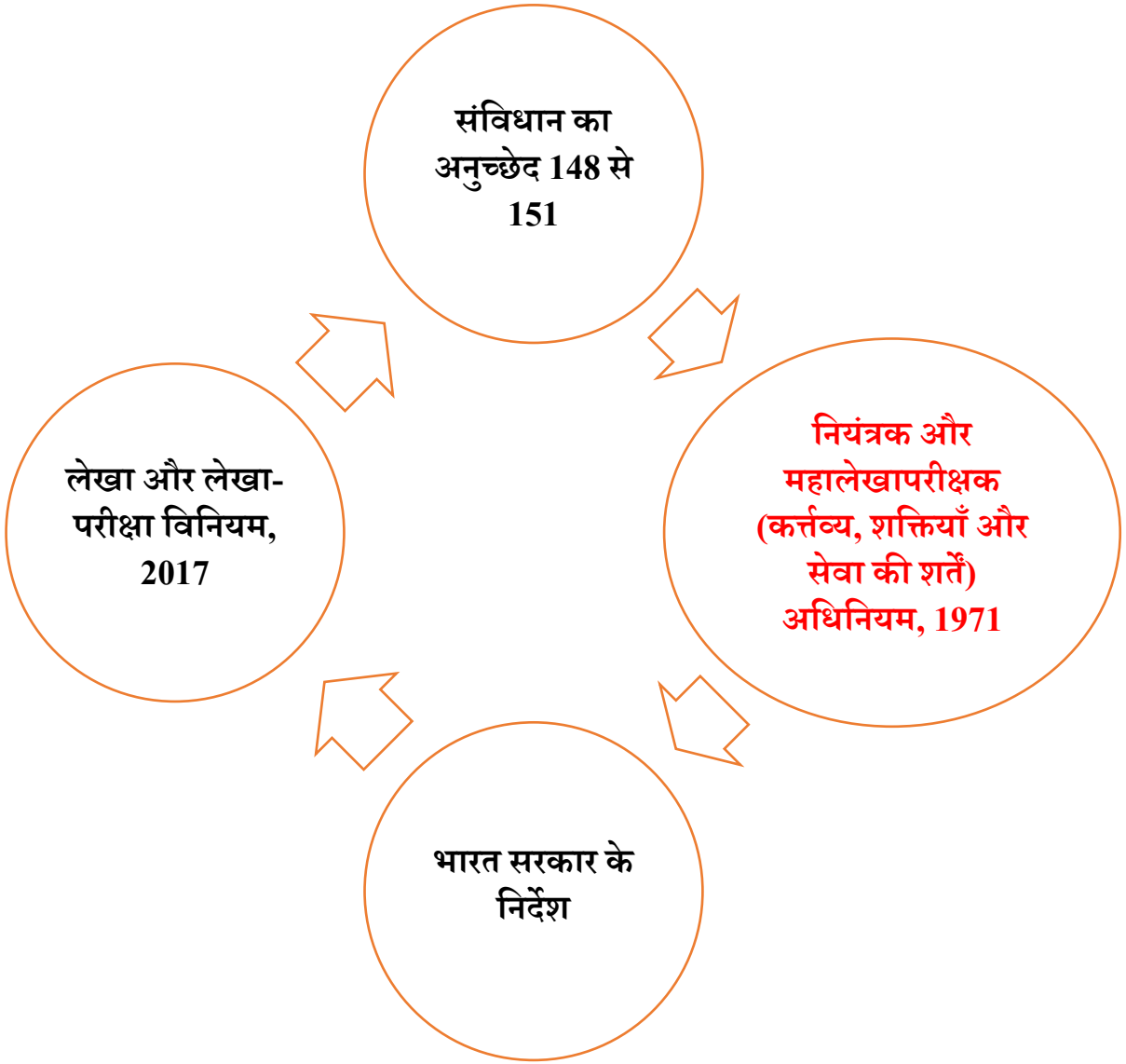

CAG के कार्य और शक्तियाँ

CAG भारत की संचित निधि और प्रत्येक राज्य, केंद्रशासित प्रदेश जिसकी विधानसभा होती है, की संचित निधि से संबंधित खातों के सभी प्रकार के खर्चों का परीक्षण करता है।

भारत की आकस्मिक निधि और भारत के सार्वजनिक खाते के साथ-साथ प्रत्येक राज्य की आकस्मिक निधि और सार्वजनिक खाते से होने वाले सभी खर्चों का परीक्षण करता है।

केंद्र सरकार और राज्य सरकारों के किसी भी विभाग के सभी ट्रेडिंग, विनिर्माण, लाभ- हानि खातों, बैलेंस शीट और अन्य अतिरिक्त खातों का ऑडिट करता है।

संबंधित कानूनों द्वारा आवश्यक होने पर वह केंद्र या राज्यों के राजस्व से वित्तपोषित होने वाले सभी निकायों, प्राधिकरणों, सरकारी कंपनियों, निगमों और निकायों की आय-व्यय का परीक्षण करता है।

राष्ट्रपति या राज्यपाल द्वारा अनुशंसित किये जाने पर किसी अन्य प्राधिकरण के खातों का ऑडिट करता है, जैसे- कोई स्थानीय निकाय।

CAG के कार्य और शक्तियाँ

- केंद्र और राज्यों के खाते जिस प्रारूप में रखे जाएंगे, उसके संबंध में राष्ट्रपति को सलाह देता है।
- केंद्र के खातों से संबंधित अपनी ऑडिट रिपोर्ट को राष्ट्रपति को सौंपता है, जो संसद के दोनों सदनों के पटल पर रखी जाती है।
- किसी राज्य के खातों से संबंधित अपनी ऑडिट रिपोर्ट राज्यपाल को सौंपता है, जो राज्य विधानमंडल के समक्ष रखी जाती है।
- संसद की लोक लेखा समिति (Public Accounts Committee) के मार्गदर्शक, मित्र और सलाहकार के रूप में भी कार्य करता है।

CAG और लोक लेखा समिति

- लोक लेखा समिति भारत सरकार अधिनियम, 1919 के तहत गठित एक स्थायी संसदीय समिति है।
- CAG की ऑडिट रिपोर्ट केंद्र और राज्य में लोक लेखा समिति को सौंपी जाती है।
- विनियोग खातों, वित्त खातों और सार्वजनिक क्षेत्र पर ऑडिट रिपोर्ट की जाँच लोक लेखा समिति द्वारा की जाती है।
- केंद्रीय स्तर पर इन रिपोर्टों को CAG द्वारा राष्ट्रपति को प्रस्तुत किया जाता है, जो संसद में दोनों सदनों के पटल पर रखी जाती हैं।
- CAG सबसे ज़रूरी मामलों की एक सूची तैयार करके लोक लेखा समिति को सौंपता है।
- CAG कभी-कभी राजनेताओं और सरकारी अधिकारियों के विचारों की व्याख्या और अनुवाद करता है।
- CAG यह देखता है कि उसके द्वारा प्रस्तावित सुधारात्मक कार्रवाई की गई है या नहीं। यदि नहीं तो वह मामले को लोक लेखा समिति के पास भेज देता है जो मामले पर आवश्यक कार्रवाई करती है।

पूर्व CAG विनोद राय द्वारा सुझाए गए सुधार

- CAG के दायरे में सभी निजी-सार्वजनिक सहभागी (PPP), पंचायती राज संस्थान और सरकार द्वारा वित्तपोषित संस्थानों को लाना चाहिये।
- 1971 के CAG एक्ट में संशोधन किया जाना चाहिये ताकि शासन में बदलाव से ताल-मेल हो सके।
- नया CAG चुनने के लिये मुख्य सतर्कता आयुक्त (CVC) के चयन की तरह एक कॉलेजियम जैसा तंत्र होना चाहिये।

By Shubham Tripathi Sir

तौर-तरीकों में बदलाव की ज़रूरत

सरकारी धन और सार्वजनिक वस्तुओं का बड़े पैमाने पर दुरुपयोग हो रहा है। इसे रोकने के लिये CAG को अपने ऑडिट तंत्र में बदलाव करने चाहिये।

CAG को सतत विकास लक्ष्यों का ऑडिट करने और GST के कार्यान्वयन जैसे मुद्दों की जाँच के लिये तैयार किया जाना चाहिये।

बिग डेटा क्रांति के मद्देनज़र CAG ने वर्ष 2016 में बिग डेटा मैनेजमेंट पॉलिसी के साथ काम किया तथा दिल्ली में डेटा मैनेजमेंट एंड एनालिटिक्स के लिये एक केंद्र भी स्थापित किया।

CAG ने संयुक्त राष्ट्र मुख्यालय का सफलतापूर्वक ऑडिट किया, जिसमें कई कठिन कार्य शामिल थे। यह भारत के CAG की विश्वसनीयता को दर्शाता है।

नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक (कैग) की कमियां या आलोचनाएँ

1. यह केवल सलाहकारी संस्था है, कोई वास्तविक शक्ति प्राप्त नहीं है ।
2. गुप्त सेवा व्यय कैग की लेखा-परीक्षा भूमिका पर सीमाएं निर्धारित करता है।
3. कैग की भूमिका व्यय होने के बाद केवल व्यय का लेखा परीक्षा करना है।
4. कैग का संचित निधि से धन निकासी पर कोई नियंत्रण नहीं है ।
5. सार्वजनिक निगमों की लेखा-परीक्षा में कैग की भूमिका सीमित है ।
6. कैग का पद औपनिवेशिक काल की देन है

संघ लोक सेवा आयोग

- **ऐतिहासिक पृष्टभूमि:**
  - भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन के दौरान राजनीतिक आन्दोलन चलाया उसकी एक प्रमुख मांग थी कि इंग्लैंड में हो रही लोक सेवा आयोग में भर्ती भारत में हो
  - प्रथम लोक सेवा आयोग की स्थापना अक्तूबर 1926 को हुई। आज़ादी के बाद संवैधानिक प्रावधानों के तहत 26 अक्तूबर 1950 को लोक आयोग की स्थापना व संवैधानिक दर्जा दिया
  - इस नव स्थापित लोक सेवा आयोग को संघ लोक सेवा आयोग नाम दिया गया।
- **संवैधानिक प्रावधान:**
  - यह एक संवैधानिक संस्था है क्योकि इसकी स्थापना संविधान के अनुछेद 315 के अंतर्गत हुई है। सामान्यता आयोग में अध्यक्ष सहित 9 से 11 सदस्य होते है,
  - संघ लोक सेवा आयोग सिविल सेवको की भर्ती के लिए मुख्य संस्था है जो केन्द्र एवं केन्द्र शासित प्रदेशो में विभिन्न प्रशासनिक परीक्षाओं का आयोजन करता है।

- **पृष्ठभूमि**

  - संविधान के भाग-14 के अंतर्गत अनुच्छेद 315-323 में एक संघीय लोक सेवा आयोग और राज्यों के लिए राज्य लोक सेवा आयोग के गठन का प्रावधान है।
  - परन्तु दो या अधिक राज्य चाहे तो संयुक्त लोक सेवा आयोग की व्यवस्था है,
  - परन्तु दो या अधिक राज्य चाहे तो संयुक्त लोक सेवा आयोग की स्थापना की जा सकती है और उनकी प्रार्थना पर कानून द्वारा ऐसी व्यवस्था की जा सकती है

अनुच्छेद- 315. संघ और राज्यों के लिए लोक सेवा आयोग

अनुच्छेद- 316. सदस्यों की नियुक्ति और पदावधि

अनुच्छेद- 317. लोक सेवा आयोग के किसी सदस्य का हटाया जाना और निलंबित किया जाना

अनुच्छेद- 318. आयोग के सदस्यों और कर्मचारियों की सेवा की शर्तों के बारे में विनियम बनाने की शक्ति

अनुच्छेद- 319. आयोग के सदस्यों द्वारा ऐसे सदस्य न रहने पर पद धारण करने के संबंध में रोक

अनुच्छेद- 320 लोक सेवा आयोगों के कार्य

अनुच्छेद- 321. लोक सेवा आयोगों के कार्यों का विस्तार करने की शक्ति

अनुच्छेद- 322. लोक सेवा आयोगों के व्यय

अनुच्छेद-323. लोक सेवा आयोगों के प्रतिवेदन

अनुच्छेद 315 के द्वारा संघ में संघीय सेवा आयोग की स्थापना की गई है. इसमें एक अध्यक्ष और सात अन्य सदस्य होते हैं. अध्यक्ष और अन्य सदस्यों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है.

इनका कार्यकाल, पदभार ग्रहण करने की तिथि से छह साल तक अथवा 65 वर्ष की आयु प्राप्त करने तक होता है इसमें कम-से-कम आधे सदस्य ऐसे अवश्य हो जो कम-से-कम 10 वर्षों तक सरकारी सेवा का अनुभव प्राप्त कर चुके हैं.

आयोग का कोई भी सदस्य उसी पर दुबारा नियुक्त नहीं किया जा सकता. संघ लोक सेवा आयोग का अध्यक्ष संघ या राज्यों में अन्य किसी पद पर नियुक्त नहीं किया जा सकता है. आयोग के सदस्यों का वेतन राष्ट्रपति द्वारा निधारित होता है.

आयोग के सदस्यों की नियुक्ति के उपरान्त उनकी सेवा की शर्तों को उनके हित के विरुद्ध बदला नहीं जा सकता. इस समय अध्यक्ष का वेतन (7th pay commission के बाद) 2.5 लाख और सदस्यों का वेतन 2.25 लाख है, जो भारत सरकार की संचित निधि से दिया जाता है.

आयोग के सदस्यों की उनके bad conduct के लिए राष्ट्रपति आदेश द्वारा हटाया भी जा सकता है. यदि राष्ट्रपति को किसी भी सदस्य के खिलाफ bad conduct की रिपोर्ट मिले तो वह विषय न्यायालय के पास विचार के लिये प्रस्तुत होगा. न्यायालय अनुसार उस सदस्य पर कार्यवाही की जावेगी

निम्न कारणों के उपस्थित होने पर राष्ट्रपति आयोग के किसी भी सदस्य को हटा सकता है

- यदि वह व्यक्ति दिवालिया सिद्ध हो.
- यदि अपने कार्यकाल में वह कोई दूसरा पद स्वीकार कर ले.
- शारीरिक अस्वस्थता के कारण कार्य करने के लिए अक्षम हो गया हो.
- यदि भारत या राज्य-सरकार के साथ करार किये गये किसी contract के साथ उसका सम्बन्ध हो या उससे कोई लाभ प्राप्त हो रहा हो.

संघ लोक सेवा आयोग के कार्य =अनुच्छेद 320

- यह अखिल भारतीय सेवाओं, केन्द्रीय सेवाओं और केन्द्र शासित राज्यों की लोक सेवाओं की नियुक्ति के लिए परीक्षा आयोजित करता है
- यह उन राज्यों के अनुरोध पर किसी ऐसी सेवा के लिए संयुक्त भर्ती संबंधी योजना की तैयारी और उसे संचालित करने का कार्य करता है, जिस सेवा के लिए विशेष योग्यताधारी अभ्यर्थियों की आवश्यकता होती है।
- यह राष्ट्रपति को निम्नलिखित विषयों पर सलाह भी देता है:

  (अ) सार्वजनिक लोक सेवाओं में भर्ती के तरीकों के बारे में सभी मामलों पर।

  (ब) अनुशासनात्मक मामलों पर

  (स) कानूनी खर्चे के प्रतिकर पर
- संघ की सेवाओं से जुड़े अन्य कार्य भी संसद द्वारा संघ लोक सेवा आयोग को सौंपे जा सकते हैं।
- संघ लोक सेवा आयोग अपने कार्य निष्पादन से संबंधित रिपोर्ट प्रतिवर्ष राष्ट्रपति को प्रस्तुत करता है। (अनु. -323)

आयोगों के प्रतिवेदन

- संघीय लोक सेवा आयोग (UPSC) को प्रतिवर्ष अपने कार्यों के सम्बन्ध में एक प्रतिवेदन तैयार कर राष्ट्रपति के सामने प्रस्तुत करना पड़ता है.
- राजकीय लोक सेवा आयोग भी प्रतिवर्ष अपना प्रतिवेदन तैयार कर राज्यपाल के सामने प्रस्तुत करता है.
- प्रतिवेदनों को सरकारी विज्ञापन के साथ सम्बन्धित विधायिका यानी संसद् के दोनों सदनों और राज्य के विधान-मंडलों के सामने प्रस्तुत किया जाता है.

संघ लोक सेवा आयोग की स्वतंत्रता

- आयोग के अध्यक्ष एवं सदस्यों को कार्यकाल की सुरक्षा प्राप्त है। अर्थात् - उन्हें राष्ट्रपति द्वारा ही संविधान में दिए गए आधार तथा प्रक्रिया के अनुसार ही हटाया जा सकता है।
- आयोग के अध्यक्ष एवं सदस्यों की सेवा शर्तों में नियुक्ति के बाद कोई अलाभकारी परिवर्तन नहीं किया जा सकता है।
- आयोग के समस्त व्यय तथा अध्यक्ष व सदस्यों के वेतन भत्ते भारत की संचित निधि पर भारित होते हैं।
- आयोग के अध्यक्ष अपने कार्यकाल की समाप्ति पर भारत या किसी राज्य सरकार के अधीन कोई पद ग्रहण नहीं करेगा।
- आयोग के सदस्य अपने कार्यकाल की समाप्ति पर अध्यक्ष पद छोड़कर भारत या किसी राज्य सरकार के अधीन कोई पद ग्रहण नहीं करेगा।
- आयोग के अध्यक्ष व सदस्य एक बार कार्यकाल पूरा करने के बाद पुनर्नियुक्ति के पात्र भी नहीं होंगे।

संघ लोक सेवा आयोग की सीमाएं

- सरकार ने नौकरियों में आरक्षण प्रदान करते समय संघ लोक सेवा आयोग से परामर्श नहीं लिया।
- Group (C) एवं (D) की सेवाओं की भर्ती संघ लोग सेवा आयोग द्वारा नहीं की जाती है।
- अनेक सार्वजनिक संस्थाओं इसरो (ISRO), डी.आर.डी.ओ.(DRDO) व केन्द्रीय विश्वविद्यालयों (Central Universities) आदि से संबंधित नियुक्तियाँ संघ लोक सेवा आयोग नहीं करता है।
- राष्ट्रपति संघ लोक सेवा आयोग के अधिकार क्षेत्र में शामिल किसी पद सेवा व विषय को परिवर्तित कर सकता है।

मध्यप्रदेश लोक सेवा आयोग

- अनुच्छेद के अनुसार 27 अक्टूबर 1956 को गठित
- 315 और राज्य पुनर्गठन की धारा 118 (3)
- संवैधानिक प्रावधान – अनुच्छेद 315 से 323
- राजेश मेहरा वर्तमान कार्यकारी अध्यक्ष हैं।
- प्रथम अध्यक्ष – डी वी रेगे
- प्रथम परीक्षा – 1958
- मुख्यालय – इंदौर

By Shubham Tripathi Sir

संरचना

राज्य लोक सेवा आयोग (State PSC) के अध्यक्ष व सदस्यों की नियुक्ति राज्यपाल का निर्धारण राष्ट्रपति के विवेक पर निर्भर करता है , तथा इसके सदस्यों की संख्या निर्धारण राज्यपाल के विवेक पर निर्भर करता है |

राज्यपाल के पास राज्य लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष तथा सदस्यों की सेवा शर्तों को निर्धारित करने का अधिकार है किंतु यह आवश्यक है , की इसके आधे सदस्यों को भारत सरकार अथवा राज्य सरकार के अधीन 10 वर्ष कार्य करने का अनुभव होना चाहिएँ|

आयोग के अध्यक्ष व सदस्यों का कार्यकाल 6 वर्ष या 62 वर्ष की आयु जो पहले पूर्ण हो निर्धारित किया गया है, किंतु उन्हें किसी भी समय राष्ट्रपति द्वारा संविधान में उल्लेखित प्रक्रिया के आधार पर हटाया जा सकता है|

स्वतंत्रता

राष्ट्रपति द्वारा राज्य लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष व सदस्यों को संविधान में उल्लेखित प्रक्रिया व कदाचार के आधार पर भी हटाया जा सकता है ,

किंतु ऐसे मामलों में उच्चतम न्यायालय जाँच के बाद यदि उन्हें हटाने का समर्थन करता है तो राष्ट्रपति द्वारा उन्हें उनके पद से हटाया जा सकता है |

अध्यक्ष व सदस्यों की नियुक्ति व सेवा शर्तें राज्यपाल द्वारा तय की जाती है किंतु नियुक्ति के बाद इसमें अलाभकारी परिवर्तन नहीं किया जा सकता है |

स्वतंत्रता

- राज्य लोक सेवा आयोग (State PSC) के अध्यक्ष व सदस्यों का वेतन, भत्ते, पेंशन व आदि सभी खर्चे राज्य की संचित निधि पर भारित होते है, अत: विधानमंडल में इस पर मतदान नहीं किया जा सकता है |
- सेवानिवृति के बाद राज्य लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष व सदस्य केंद्र सरकार अथवा राज्य सरकार के अधीन किसी नियोजन के पात्र नहीं होंगे , किंतु इसके सदस्य संघ लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष तथा अन्य किसी राज्य लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष के रूप में नियुक्त होने के पात्र होंगे |
- राज्य लोक सेवा आयोग (State PSC) के अध्यक्ष व सदस्यों को पुन: दूसरे कार्यकाल के लिए नियुक्त नहीं किया जा सकता है |

आयोग के कार्य

1. राज्य की सेवाओं में नियुक्ति के लिए परीक्षाओं का आयोजन करना |
2. राज्य की सिविल सेवाओं में कार्यरत व्यक्तियों की नियुक्ति , स्थानांतरण , पदोन्नति एवं प्रशिक्षण संबंधित मामलें |
3. विशेष परिस्थितियों में सेवा के विस्तार व सेवानिवृत नौकरशाहों की पुन: नियुक्ति संबंधित मामलें |
4. दो या दो से अधिक राज्यों के अनुरोध पर संयुक्त राज्य लोक सेवा आयोग के गठन का प्रावधान संविधान में किया गया है | इसके सभी कार्य अन्य राज्यों के लोक सेवा आयोग की तरह है किंतु इनकी नियुक्ति व सेवा शर्ते राष्ट्रपति द्वारा निर्धारित की जाती है |

आयोग के कार्य

1. राज्य की सेवाओं में नियुक्ति के लिए परीक्षाओं का आयोजन करना |
2. राज्य की सिविल सेवाओं में कार्यरत व्यक्तियों की नियुक्ति , स्थानांनतरण , पदोन्नति एवं प्रशिक्षण संबंधित मामलें |
3. विशेष परिस्थितियों में सेवा के विस्तार व सेवानिवृत नौकरशाहों की पुनः नियुक्ति संबंधित मामलें |
4. दो या दो से अधिक राज्यों के अनुरोध पर संयुक्त राज्य लोक सेवा आयोग के गठन का प्रावधान संविधान में किया गया है | इसके सभी कार्य अन्य राज्यों के लोक सेवा आयोग की तरह है किंतु इनकी नियुक्ति व सेवा शर्तें राष्ट्रपति द्वारा निर्धारित की जाती है |

आयोग के कार्य

- यह राज्यपाल को आयोग द्वारा किए गए कार्य की सालाना वार्षिक रिपोर्ट प्रस्तुत करता हैं|
- राज्य विधायिका राज्य की सेवाओं से संबंधित SPSC को अतिरिक्त कार्य प्रदान कर सकती है। SPSC के कार्य का विस्तार निकाय की प्रणाली के द्वारा या कानून द्वारा गठित अन्य निकाय या इसके तहत कोई भी सार्वजनिक संस्था द्वारा किया जा सकता है|
- SPSC की वार्षिक रिपोर्ट उनके प्रदर्शन के बारे में बताते हुए राज्यपाल को सौंपी जाती है| उसके बाद राज्यपाल इस रिपोर्ट को राज्य विधानमण्डल के समक्ष मामलों को समझाते हुए ज्ञापन के साथ रखता है|

नीति आयोग

- स्वाधीनता के बाद देश ने तत्कालीन सोवियत संघ के समाजवादी शासन की संरचना को अपनाया, जिसमें योजनाएँ बनाकर काम किया जाता था।
- पंचवर्षीय तथा एकवर्षीय योजनाएँ काफी लंबे समय तक देश में चलती रहीं।
- 1 जनवरी, 2015 को योजना आयोग के स्थान पर केंद्रीय मंत्रिमंडल के एक संकल्प पर नीति आयोग का गठन किया
- इसमें सहकारी संघवाद की भावना को केंद्र में रखते हुए अधिकतम शासन, न्यूनतम सरकार के अनुसार कार्य किया।

नीति आयोग

नीति आयोग के पहले उपाध्यक्ष- अरविंद पनगढ़िया

वर्तमान उपाध्यक्ष- सुमन बेरी

पूर्व CEO - अमिताभ कांत

वर्तमान CEO - बीवीआर सुब्रमण्यम जून 2022 में नियुक्त

By Shubham Tripathi Sir

नीति आयोग की प्रशासनिक संरचना

- अध्यक्ष: प्रधानमंत्री
- उपाध्यक्ष: प्रधानमंत्री द्वारा नियुक्त
- संचालन परिषद: सभी राज्यों के मुख्यमंत्री और केंद्रशासित प्रदेशों के उपराज्यपाल।
- क्षेत्रीय परिषद: विशिष्ट क्षेत्रीय मुद्दों को संबोधित करने के लिये प्रधानमंत्री या उसके द्वारा नामित व्यक्ति मुख्यमंत्रियों और उपराज्यपालों की बैठक की अध्यक्षता करता है।
- तदर्थ सदस्यता: अग्रणी अनुसंधान संस्थानों से बारी-बारी से 2 पदेन सदस्य।
- पदेन सदस्यता: प्रधानमंत्री द्वारा नामित केंद्रीय मंत्रिपरिषद के अधिकतम चार सदस्य।
- मुख्य कार्यकारी अधिकारी (CEO): भारत सरकार का सचिव जिसे प्रधानमंत्री द्वारा एक निश्चित कार्यकाल के लिए नियुक्त किया जाता है।
- विशेष आमंत्रित: प्रधानमंत्री द्वारा नामित विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञ।

प्रमुख अंतर

नीति आयोग	योजना आयोग
यह एक सलाहकार थिंक टैंक के रूप में कार्य करता है।	इसने एक संवैधानिक निकाय के रूप में कार्य किया था, जबकि इसे ऐसा दर्जा नहीं मिला था।
यह सदस्यों की व्यापक विशेषज्ञता पर बल देता है।	यह सीमित विशेषज्ञता पर निर्भर था।
यह सहकारी संघवाद की भावना पर कार्य करता है क्योंकि यह राज्यों की समान भागीदारी सुनिश्चित करता है।	इसकी वार्षिक योजना बैठकों में राज्यों की भागीदारी बहुत कम रहती थी।
प्रधानमंत्री द्वारा नियुक्त सचिवों को CEO के रूप में जाना जाता है।	सचिवों को सामान्य प्रक्रिया के माध्यम से नियुक्त किया जाता था।
यह Bottom-Up Approach पर कार्य करता है।	यह Top-Down Approach पर कार्य करता था।
इसे नीतियाँ लागू करने का अधिकार नहीं है।	यह राज्यों के लिये नीतियाँ बनाता था और स्वीकृत परियोजनाओं के लिये धन आवंटित करता था।
इसे धन आवंटित करने की शक्तियाँ नहीं हैं जो वित्त मंत्री में निहित हैं।	इसे मंत्रालयों और राज्य सरकारों को धन आवंटित करने की शक्तियाँ प्राप्त थीं।

नीति आयोग के उद्देश्य

- योजना का विकेंद्रीकरण है, लेकिन पंचवर्षीय योजना के भीतर।
- परंपरागत नौकरशाही के स्थान पर विशेषज्ञता और प्रदर्शन के आधार पर ज़िम्मेदारियाँ तय करना।
- नीति आयोग समय के साथ परिवर्तन के एक एजेंट के रूप में उभर सकता है और सार्वजनिक सेवाओं की बेहतर डिलीवरी करने तथा उसमें सुधार के एजेंडे में योगदान दे सकता है।
- नीति आयोग में देश में कुशल, पारदर्शी, नवीन और जवाबदेह शासन प्रणाली का प्रतिनिधि बनने की क्षमता है।
- योजना आयोग की तुलना में नीति आयोग को अधिक विश्वसनीय बनाने के लिये इसे बजटीय प्रावधानों में स्वतंत्रता होनी चाहिये और यह योजना तथा गैर-योजना के रूप में नहीं बल्कि राजस्व और पूंजीगत व्यय की स्वतंत्रता के रूप में होनी चाहिये। इस पूंजीगत व्यय की वृद्धि से अर्थव्यवस्था में सभी स्तरों पर बुनियादी ढाँचे का नुकसान दूर हो सकता है।

नीति आयोग का महत्त्व

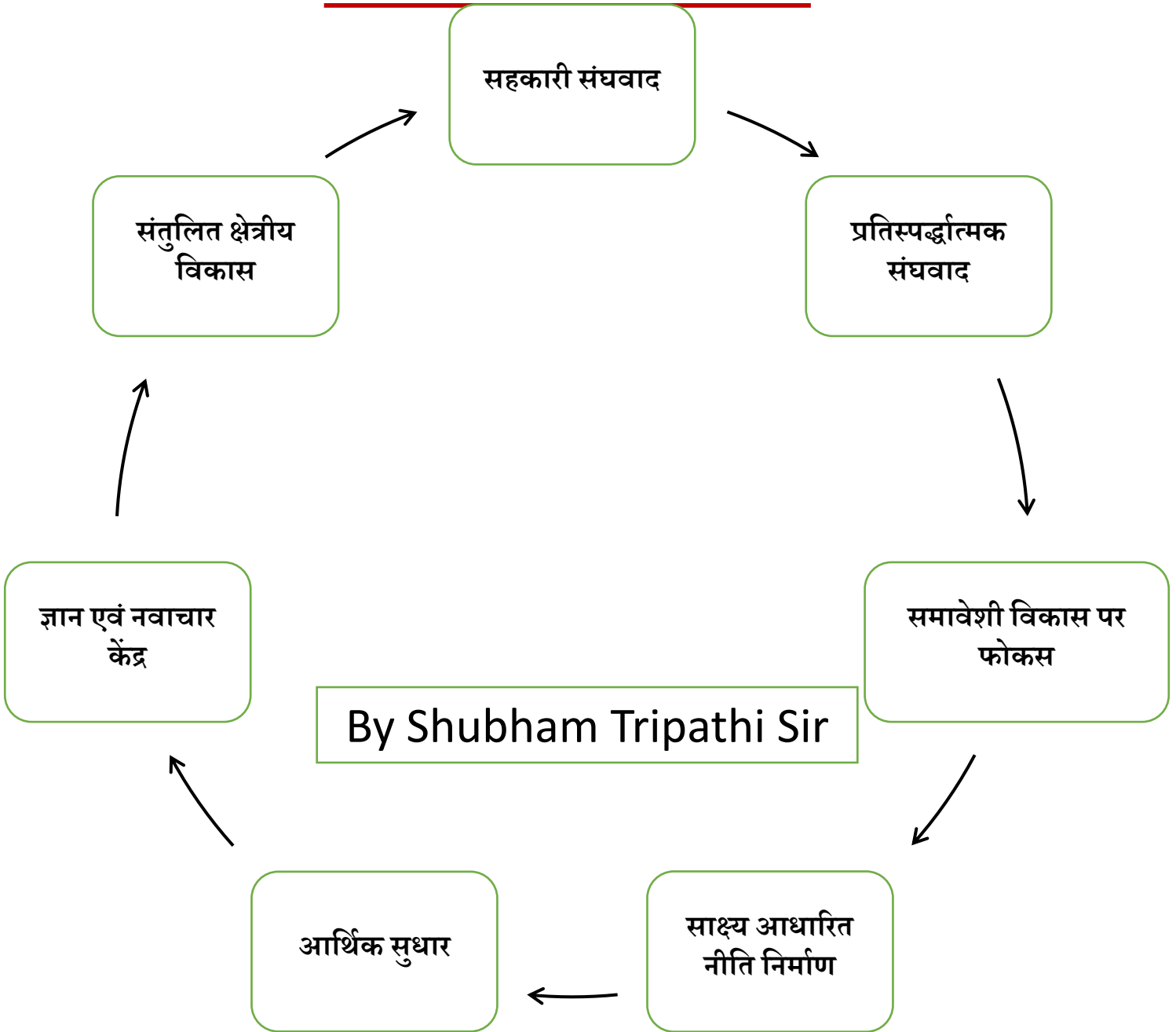

नीति आयोग का महत्त्व

- **समावेशी विकास पर फोकस**
  - इसने 115 आकांक्षी जिलों (aspirational districts) के रूपांतरण पर ध्यान केन्द्रित करते हुए एक विशेष पहल प्रारम्भ की है.
  - नीति आयोग सतत विकास लक्ष्यों के कार्यान्वयन की निगरानी हेतु एक नोडल निकाय भी है.
- **साक्ष्य आधारित नीति निर्माण**
  - यह पर्याप्त आँकड़ों पर आधारित नीति निर्माण पर ध्यान केन्द्रित करता है. जैसे कि इसने तीन-वर्षीय कार्य एजेंडा, समग्र जल प्रबंधन सूचकांक, भौगोलिक सूचना तंत्र (GIS) इत्यादि पर आधारित योजना निर्माण का प्रोत्साहन दिया है.
- **आर्थिक सुधार**
  - इसने कृषि उत्पाद विपणन समिति अधिनियम (APMC Act), उर्वरक क्षेत्र के कायाकल्प, किसानों की आय में वृद्धि, मॉडल एग्रीकल्चर लैंड लीजिंग एक्ट आदि में सुधारों पर नीतिगत प्रकाशित किया है.

नीति आयोग के समक्ष चुनौतियाँ

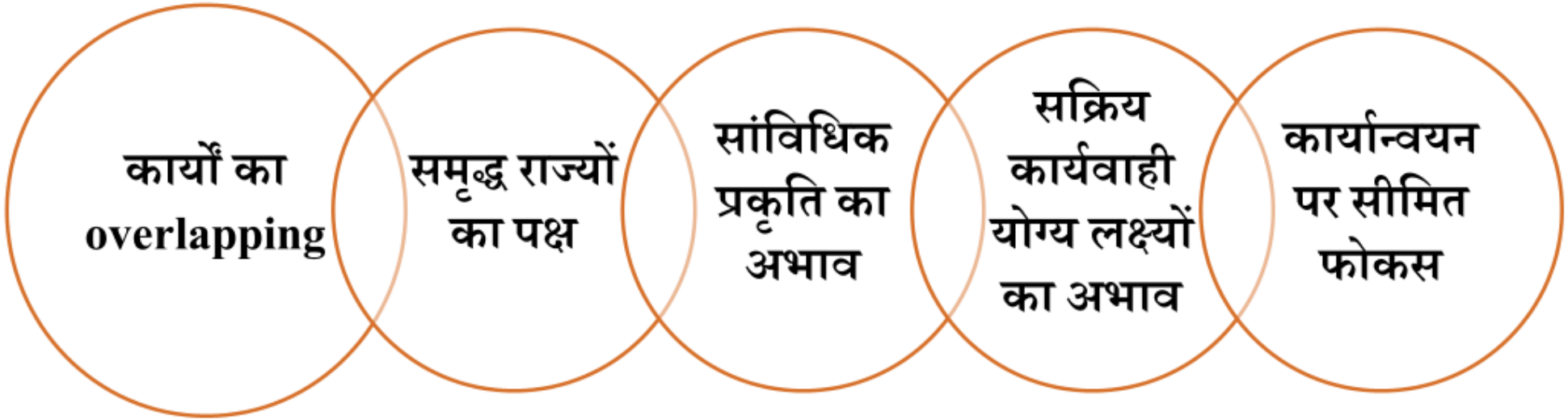

नीति आयोग के प्रभावी governance के स्तंम्भ

- लोक कल्याण
- अति सक्रियता (नागरिक जरूरतों के प्रति)
- सहयोग(केन्द्र राज्य के मध्य)
- महिल सशक्तिकरण
- सभी समूहों का समावेशन
- युवाओं के लिये अवसर की समानता
- पारदर्शिता स्थापित कर सरकार को जवाबदेही व उत्तरदायी बनाना

भारतीय राजनीति में जाति धर्म वर्ग नृजातीयता भाषा एवं लिंग की भूमिका

जाति व्यवस्था प्राचीन काल से वेदों में वर्णित प्रथा या व्यवस्था है जो विज्ञान, प्रौद्योगिकी, ज्ञान, कला, खेल एवं आर्थिक समृद्धि के विषय में रोक करता है

अध्ययनों से पता चलता है कि भारत में 94% विवाह सजातीय (endogamous) होते हैं और 90% निचली नौकरियाँ वंचित जातियों द्वारा की जाती हैं मीडिया, न्यायपालिका, उच्च शिक्षा, नौकरशाही या कॉर्पोरेट क्षेत्र जैसे विभिन्न क्षेत्रों में, विशेष रूप से निर्णय लेने के स्तर पर, जाति विविधता का अभाव इन संस्थानों और उनके प्रदर्शन को कम कर रहा है।

भारतीय राजनीति में जाति की भूमिका

- बाबू जगजीवनराम के अनुसार - जाति भारतीय राजनीति की सर्वाधिक महत्वपूर्ण सत्यता है। जाति की राजनीति में भूमिका निम्न बिन्दुओं में की जा सकती है।

भूमिका

(i) जाति प्रधान राजनीतिक दलो का विकास हो रहा है।

(ii) जाति के आधार पर चुनाव क्षेत्र में उम्मीदवारों का चयन किया जाता है।

(iii) जाति के आधार पर राजनीतिक अभि जनों Elite का उदय।

(iv) मंत्रिमंडल के निर्माण में जातिगत प्रतिनिधित्व।

(v) राजनीतिक दलों द्वारा जातिगत आरक्षण के माध्यम से हितों को पूरा करने हेतु प्रयासरत रहते हैं। जैसे- मध्यप्रदेश सरकार द्वारा 27 प्रतिशत ओबीसी आरक्षण |

- जातिवाद ने लोकतंत्र की धारणा के विरुद्ध राष्ट्र के एकीकृत स्वरूप के लिए संकट पैदा कर दिया है।

साम्प्रदायिकता से भारतीय लोकतंत्र विकृत (कमजोर) हुआ है

वर्तमान में धर्म का राजनीतिक प्रयोग किया जा रहा है, यही साम्प्रदायिकता कहलाता है। साम्प्रदायिकता लोकतंत्र नकारात्मक रूप से प्रभावित करती है। इसके पीछे निम्न कारक हैं :

- धर्म के आधार पर वोट मांगना
- राजनीतिक दलों द्वारा Satisfaction की नीति का प्रयोग
- कानून की असमानता
- भारत की दोषपूर्ण धर्मनिरपेक्षता

क्षेत्रीय दल के उदय के कारण

- भारतीय समाज में सांस्कृतिक व जातीय बहुलता
- भाषाई आधार पर राज्यों का पुर्नगठन।।
- विकास प्रकिया में आर्थिक असमानता तथा क्षेत्रीय असंतुलन। जैसे बिहार व झारखण्ड ।
- राजनीतिक प्रक्रिया में जाति व धर्म की भूमिका ।
- जनजातीय समूह में असंतोष व अलगाव की भावना ।
- क्षेत्रीय आकांक्षाओं को संतुष्ट करने में राष्ट्रीय राजनीति की विफलता ।

जाति आधारित जनगणना

कब-कब क्या हुआ

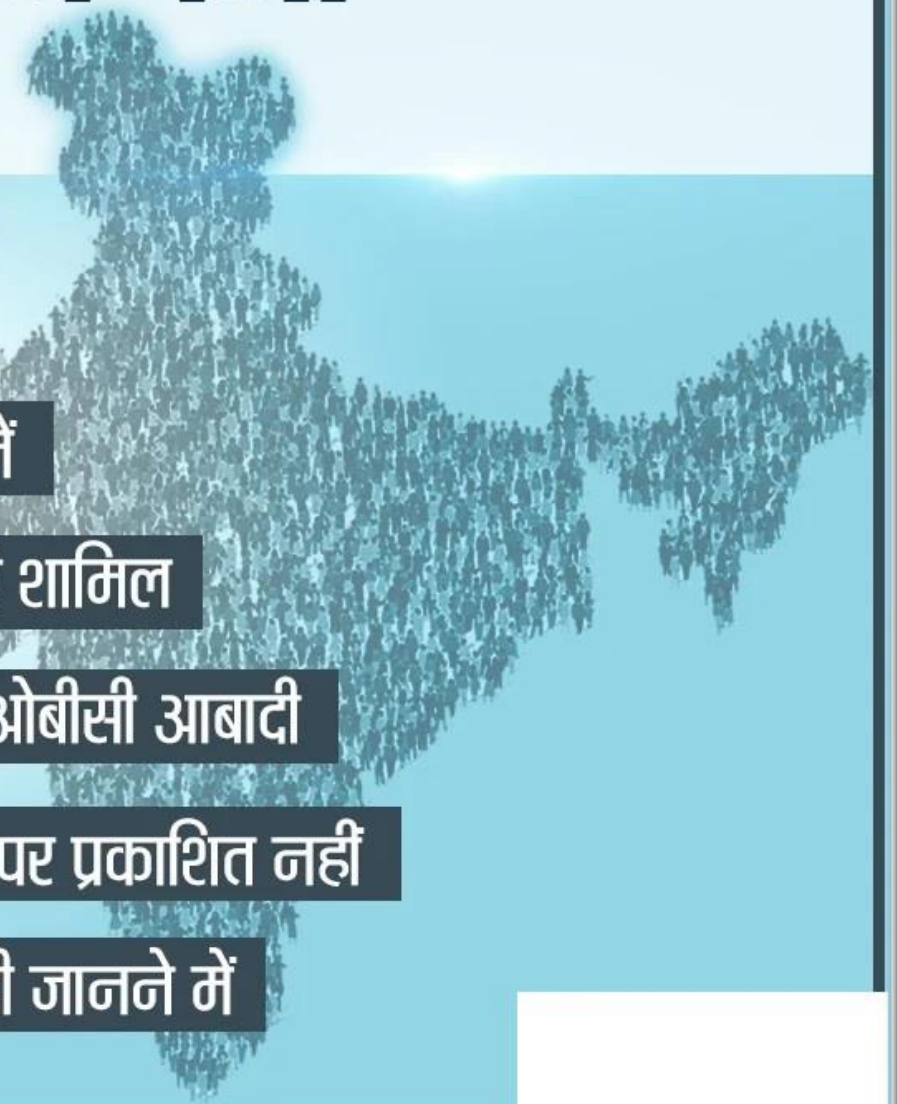

- देश में जनगणना की शुरुआत 1881 में
- आखिरी बार जाति आधारित जनगणना 1931 में
- 1951-2011 तक केवल एससी-एसटी के आंकड़े शामिल
- 1931 की जनगणना के हिसाब से 52 फीसदी ओबीसी आबादी
- 2011 की जनगणना में जातिगत आंकड़े एकत्र पर प्रकाशित नहीं
- पार्टियों की दिलचस्पी ओबीसी की सटीक आबादी जानने में

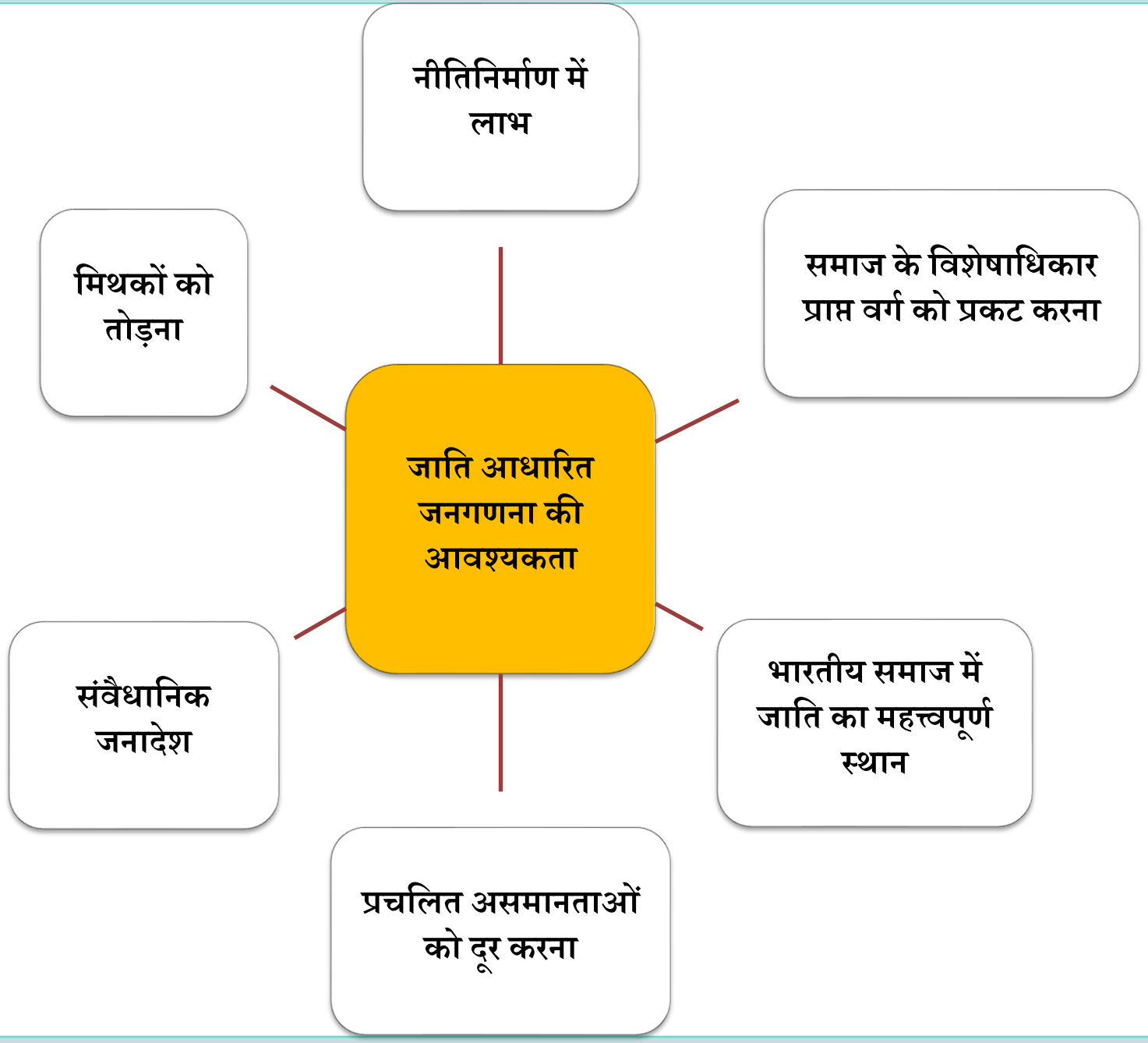
जाति आधारित जनगणना की आवश्यकता
नीतिनिर्माण में लाभ
समाज के विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग को प्रकट करना
भारतीय समाज में जाति का महत्त्वपूर्ण स्थान
प्रचलित असमानताओं को दूर करना
संवैधानिक जनादेश
मिथकों को तोड़ना

- **नीतिनिर्माण में लाभ:** जाति आधारित जनगणना का उद्देश्य केवल आरक्षण के मुद्दे तक सीमित नहीं है; यह वास्तव में नीति निर्माताओं को बेहतर नीतियों और कार्यान्वयन रणनीतियों को विकसित करने का अवसर देगी और इसके साथ ही संवेदनशील मुद्दों पर अधिक तर्कसंगत बहस को किया जा सकता है।

- **समाज के विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग का प्रकटीकरण:** समाज के विशेषाधिकार प्राप्त जाति ने कुछ समुदायों के लिये लाभ की स्थिति उत्पन्न की है और इसे अन्य वंचित जातियों पर लागू किया जाना भी आवश्यक है।

- **भारतीय समाज में जाति का महत्त्वपूर्ण स्थान:** वर्ष 1931 के बाद से भारत में सभी जातियों की कोई प्रोफाइलिंग या अंकन नहीं हुआ है। इसके बाद से ही जाति ने हमारे जीवन में एक महत्त्वपूर्ण स्थान ग्रहण कर लिया है और अपर्याप्त आँकड़ों पर निर्भरता में भी वृद्धि हुई है।

- **प्रचलित असमानताओं को दूर करना:** धन, संसाधनों और शिक्षा के असमान वितरण के कारण अधिकांश भारतीयों के पास क्रय शक्ति की बहुत कमी है। इसे लोकतांत्रिक, वैज्ञानिक और वस्तुनिष्ठ तरीके से सुधार करने की आवश्यकता है।

- **संवैधानिक जनादेश:** हमारा संविधान जाति आधारित जनगणना आयोजित कराने का पक्षधर है। अनुच्छेद 340 सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों की दशाओं के discovery के लिये और सरकारों द्वारा इस दिशा में किये जा सकने वाले उपायों की सिफारिशें करने के लिये एक आयोग की नियुक्ति का प्रावधान करता है।

- **मिथकों को तोड़ना:** ऐसे बहुत से झूठ हैं जो वास्तव में बड़ी संख्या में विशेषकर लोगों को, सही तथ्यों से वंचित करते हैं। जैसे कर्नाटक में लंबे समय से यह दावा किया जाता रहा है कि वहाँ जातियों में लिंगायत जाति की संख्या सर्वाधिक है।

- **समावेशन और बहिर्वेशन की त्रुटियों को कम करना:** जातियों के सटीक आँकड़ों के साथ अधिकांश पिछड़ी जातियों की पहचान की जा सकती है। कुछ लोग वर्षों से लाभ उठा रहे हैं जबकि देश में ऐसे लोग भी हैं जिन्हें कोई भी लाभ नहीं मिला।

- सर्वोच्च न्यायालय ने बार-बार सरकारों से जातियों से संबंधित आँकड़े उपलब्ध कराने को कहा है; लेकिन इस तरह के आँकड़े की अनुपलब्धता के कारण यह संभव नहीं हो पाया है।

- विभिन्न आयोगों को पिछली जाति आधारित जनगणना (1931) के आँकड़ों पर निर्भर रहना पड़ा है।

आगे की राह

भारत को आँकड़ों के माध्यम से जाति के प्रश्न से निपटने के लिये उसी प्रकार साहसिक और निर्णयात्मक होने की आवश्यकता है, जिस प्रकार संयुक्त राज्य अमेरिका नस्ल, वर्ग, भाषा, अंतर-नस्लीय विवाह आदि के आँकड़े एकत्र कर नस्ल की समस्या से निपटता है।

यह आँकड़ा अमेरिका के राज्य और समाज को सही सीख देता है

राष्ट्रीय डेटा बैंक की स्थापना: सच्चर समिति की रिपोर्ट में एक राष्ट्रीय डाटा बैंक स्थापित करने की सिफारिश की गई थी।

अन्य पिछड़ी जातियों के उप-वर्गीकरण की जाँच के लिये वर्ष 2017 में न्यायमूर्ति रोहिणी समिति का गठन किया गया था; हालाँकि, डेटा के अभाव में किसी डेटा-बैंक की स्थापना या किसी उपयुक्त उप-वर्गीकरण का होना संभव नहीं है।

निष्कर्ष

हाल ही में बढ़ती सामाजिक जागरूकता के साथ जाति व्यवस्था की समाप्ति होने के आसार नजर आते हैं

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने कहा था कि

‘’यदि भारत को राष्ट्रों के समूह में गौरव का स्थान प्राप्त करना है तो सर्वप्रथम जाति को मिटाना होगा।’’

जाति और राजनीति में संबंध

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत में लोकतांत्रिक प्रक्रिया के प्रारंभ होने से भारतीय समाज में स्थापित जाति प्रथा ने मतदान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई ; वयस्क मताधिकार लागू करने के पश्चात जाति एक राजनीतिक शक्ति के रूप में उभर कर सामने आई।

भारत में जाति एवं राजनीति के मध्य आपसी संबंध को निम्न बिंदुओं के आधार पर समझ सकते हैं-

1. राजनीति में जातिवाद के प्रभाव को जाति का राजनीतिकरण कहा जा सकता है।

2. लोकतांत्रिक राजनीति के अंतर्गत राजनीति,जाति के संगठन के माध्यम से अपना आधार दृढ़ करती हैं

जाति और राजनीति में संबंध

- **सभी राजनीतिक दल सिद्धांत:** जातिवाद की निंदा करते हैं किंतु जातीयकरण के माध्यम से सत्ता प्राप्त करने का प्रयास करते हैं।
- राजनीतिक दलों द्वारा प्रत्याशियों का चयन तथा सफलता की संभावना का अनुमान जातीय मापदंडों से किया जाता है कहीं कहीं संभवत: योग्यता व सेवा तत्वों को नजरअंदाज कर दिया जाता है
- मंत्रिमंडल का निर्माण करते समय यह ध्यान रखा जाता है कि सभी जातियों को प्रतिनिधित्व प्राप्त हो जाए।
- जातीयां सरकार की निर्णय प्रक्रिया को प्रभावित करती हैं इसका उदाहरण है अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षण, मंडल आयोग द्वारा अन्य पिछड़े वर्ग के लिए आरक्षण का क्रियान्वयन।

जाति और राजनीति में संबंध

- प्रशासन में भी आरक्षण के माध्यम से जाति को महत्व प्रदान किया गया है।
- राजनीतिक नेतृत्व का जनाधार केवल जातिगत आधार तक ही सीमित है।
- जातीय संघर्ष से राजनीति के अंतर्गत हिंसा का प्रवेश हो गया है और जाति एक उपलाभ पदावली बन गई है।
- लोकतांत्रिक जाति के अंतर्गत राजनीति; जाति के संगठन के माध्यम से अपना दृढ़ करती है ।

भारतीय राजनीति में जाति की भूमिका

राजनीति पर जाति व्यवस्था का प्रभाव समय के साथ-साथ बढ़ रहा है लेकिन जाति व्यवस्था का रूप परिवर्तित होता रहता है। स्वतंत्रता के बाद भारत के राजनीतिक क्षेत्र में जाति का प्रभाव पहले की अपेक्षा बढ़ा है अत: भारतीय राजनीति में जाति की भूमिका का अध्ययन नियमानुसार किया जा सकता है-

1. जाति प्रधान राजनीतिक दलों का विकास- राजनीति के अंतर्गत सफलता प्राप्त करने के लिए जाति प्रधान राजनीतिक दलों का विकास हो रहा है। यह नेता की भावनाओं को उभार कर राजनीतिक लाभ उठाते हैं और उसी के आधार पर चुनाव जीतने का प्रयास करते हैं जैसे लोकदल पार्टी, बहुजन समाज पार्टी, समाजवादी पार्टी आदि।

2. जाति के आधार पर चुनाव क्षेत्र में उम्मीदवारों का चयन करना।

3 राजनीतिक दलों द्वारा जातिगत आरक्षण के माध्यम से हितों को पूरा करने की होड़।

4. मंत्रिमंडल के निर्माण में जातिगत प्रतिनिधित्व जैसे ब्राह्मण ,जाट ,राजपूत ,कायस्थ ,दलित व पिछड़े आदि।

5. निर्णय प्रक्रिया में जाति की भूमिका- जातीय संगठन अपने हितों के अनुसार निर्णय करने तथा अपने हितों के प्रतिकूल होने वाले निर्णयों को रोकने हेतु निर्णय प्रक्रिया को प्रभावित करने का प्रयत्न करते हैं।

6. जाति एवं प्रशासन- भारत में प्रतिनिधि संस्थाओं के अलावा प्रशासन में भी जातिगत आरक्षण की व्यवस्था की गई है अनुसूचित जाति अनुसूचित जनजाति के अलावा अन्य पिछड़े वर्गों को भी आरक्षण दिया गया है।

7. चुनाव प्रचार में जाति का सहारा- राजनीतिक दल एवं उम्मीदवार चुनाव प्रचार में जाति का खुलकर प्रयोग करते हैं चुनाव के समय जातीय समीकरण जमाए जाते हैं। प्रत्येक राजनीतिक दल क्षेत्र विशेष में जिस जाति का बाहुल्य है उसमें उसी जाति के बड़े नेता का चुनाव प्रचार हेतु भेजने का प्रयत्न करते हैं।

8. जाति के आधार पर राजनीतिक अभिजनों का उदय- जो लोग जातीय संगठनों में उच्च पदों पर पहुंच गए हैं वे ही राजनीति में भी अच्छे स्थान प्राप्त करने में सफल हुए हैं ऐसे लोग राजनीति में चाहे खुलकर जातिवाद का सहारा ना लें फिर भी यह अपनी पृष्ठभूमि को नहीं भूलते। वे अपने जातीय हितों की प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से पैरवी करते रहते हैं।

भारतीय राजनीति में धर्म की भूमिका

भारतीय राजनीति के निर्धारित तत्वों में धर्म एवं सांप्रदायिकता को अत्यंत प्रभावशाली माना गया। जहां एक ओर धर्म का प्रयोग तनाव उत्पन्न करने तथा दूसरी ओर शक्ति अर्जित करने का माध्यम माना है। धर्म के नाम से राजनीतिक दलों का गठन, चुनाव में समर्थन, मत प्राप्त करने में सहारा, धर्म के नाम पर प्रत्याशियों का चयन आदि में धर्म का स्वरूप मिलता है। जबकि सैद्धांतिक रूप से भारतीय संविधान व्यवस्था ने राज्य के धर्म के स्वरूप को अपनाया है।

राजनीति में धर्म की भूमिका

- धार्मिक व साम्प्रदायिक राजनीतिक दलों का विकास।
- धार्मिक दबाव समूहों का विकास।
- धर्म के आधार पर पृथक राज्यों एवं देशों की मांग।
- मंत्रिमण्डल निर्माण में धर्म की भूमिका
- उम्मीदवारों का चुनाव।
- धर्म के आधार पर प्रतिनिधित्व ।
- भारत में चुनावी विश्लेषण धर्म के आधार पर।
- मत व्यवहार का निर्णायक तत्व

जातिगत राजनीति के सकारा-त्मक प्रभाव

- सामाजिकता एवं एकता की भावना का विकास
- जाति की राजनीति में लोगों में राजनीतिक सक्रियता बढी
- जातीय सक्रियता के कारण समाज में उन जातियों का महत्व भी बढ़ा जो पहले राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक रूप से शक्ति विहीन थे
- जातियों में राजनीतिक जागरूकता का विकास
- जातिवाद के कारण सामाजिक संरचना में भी सकरात्मक परिवर्तन
- जाति की राजनीति में समाज की संस्कृति में सकारात्मक नये आयाम जैसे खान-पान ,वेशभूषा, रहन-सहन,
- जाति की राजनीति में जातियों के मध्य मतभेदों को कम किया है।

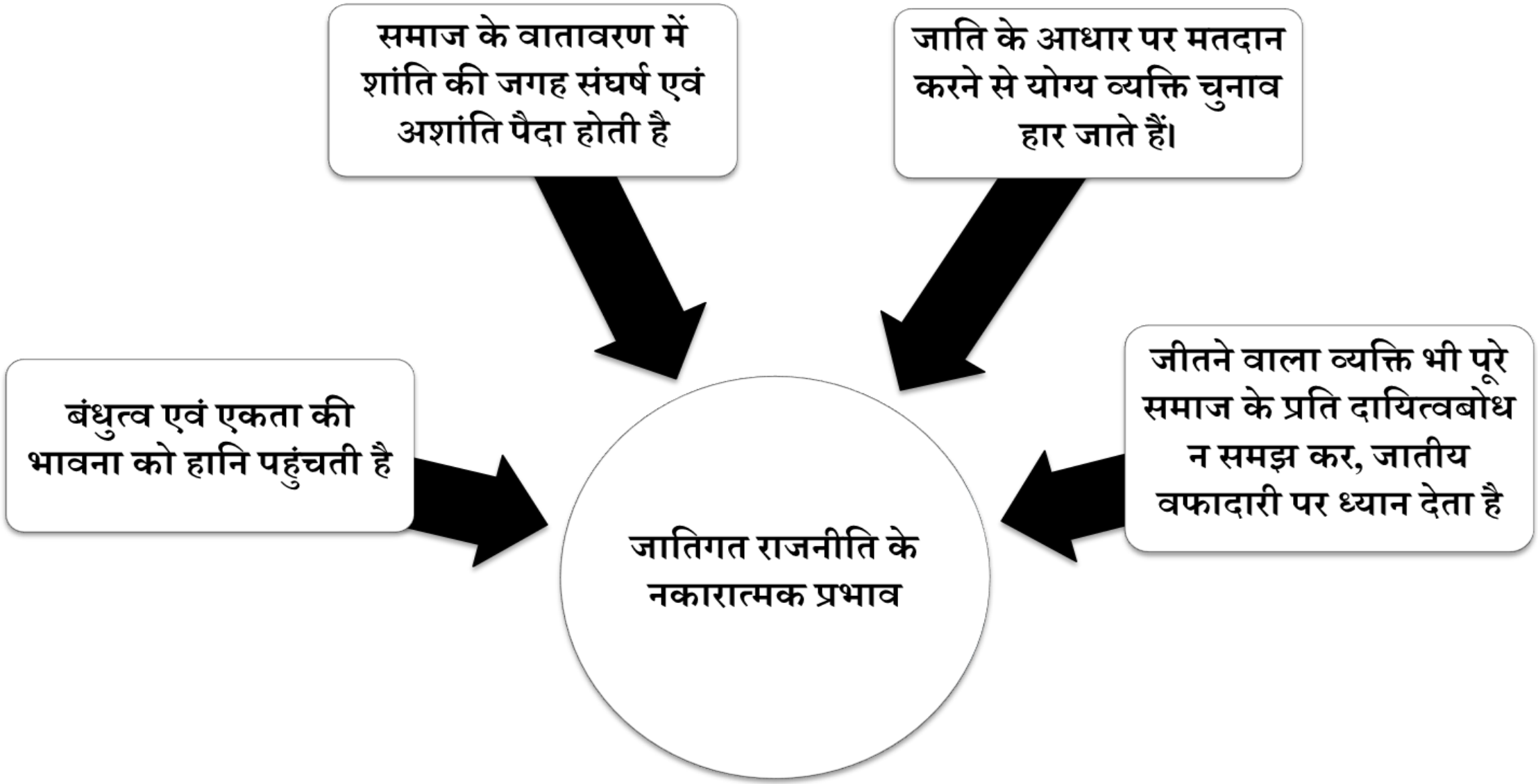
समाज के वातावरण में शांति की जगह संघर्ष एवं अशांति पैदा होती है
जाति के आधार पर मतदान करने से योग्य व्यक्ति चुनाव हार जाते हैं।
बंधुत्व एवं एकता की भावना को हानि पहुंचती है
जातिगत राजनीति के नकारात्मक प्रभाव
जीतने वाला व्यक्ति भी पूरे समाज के प्रति दायित्वबोध न समझ कर, जातीय वफादारी पर ध्यान देता है

राजनीतिक दलों का निर्माण भी जाति के आधार पर होने लगता है।

जातिवादी सोच रूढ़िवादिता को बढ़ावा देती है

वैज्ञानिक एवं प्रगतिशील दृष्टिकोण का विकास नहीं हो पाता।

अल्पसंख्यक जातीय समुदाय के लोगों में असुरक्षा की भावना का विकास होता है।

वोट बैंक की राजनीति को बढ़ावा मिलता है।

धर्म

'धर्मविहीन राजनीति' को महात्मा गांधी ने 'सात पापों' (Seven Sins) में से एक प्रमुख पाप माना था। उनका उद्देश्य राजनीति को नैतिक बनाए रखने से था। राजनीति पर भी धर्म का प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रभाव रहता है।

कौटिल्य के अर्थशास्त्र में भी व्यक्त है कि राजनीति में लोगों के 'सर्वश्रेष्ठ नैतिक मूल्यों' की परीक्षा होती है। इन नैतिक मूल्यों को बनाए रखने, उसे और उच्चता प्रदान करने के लिये मॉटिवेशन वे धर्म से प्राप्त करते थे।

भारतीय परंपरा में 'धर्म', 'धृ' धातु से निर्मित है जिसका अर्थ होता है धारण करना।

जैसे पितृ धर्म, मातृ धर्म, पुत्र धर्म, छात्र धर्म इत्यादि। यह लोगों को कुछ नैतिक कर्त्तव्य करने को प्रेरित करता है। और इस अर्थ में राजनीति में 'धर्म काम्य ही नहीं बल्कि अनिवार्य' भी है।

1951 से 2011 तक हिंदू-मुस्लिम आबादी फीसदी (%) में

वर्ष	हिंदू	मुस्लिम
1951	84.1	9.8
1961	83.4	10.7
1971	82.7	11.2
1981	82.6	11.4
1991	81.6	12.6
2001	80.5	13.4
2011	79.8	14.2

सांप्रदायिक राजनीति ने आजादी के आंदोलन को कमजोर किया

नकारात्मक परिणाम

- देश का धार्मिक आधार पर विभाजन कराया जिससे लाखों लोग बेघर हुए और हजारों मारे गये
- आजादी के बाद भी इसी दुषित राजनीति के प्रभावस्वरूप दंगे होते है
- लोगों के बीच सांपद्रायिक आधार पर द्वेष भावना बढती है
- राजनीति में अधिक महत्त्व के मुद्दे जैसे-शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार इत्यादि पर कम फोकस हो जाता है
- कुछ राजनीतिज्ञ भी लोगों की इस भावना को तूल देकर अपने उत्तरदायित्व से बचते हैं।
- अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी देश की छवि को नुकसान पहुँचता है।

महात्मा गांधी ने धर्म तथा राजनीति के संबंध में कहा है कि "धर्म विहीन राजनीति मृत देह के समान है जिसे नष्ट कर दिया जाना चाहिए।"

गांधी जी कहीं-कहीं धर्म को मजहब या पंथ के ही अर्थ में दार्शनिक स्तर पर धर्म का अर्थ स्व-कर्त्तव्य पालन में लेते हैं, जैसा भारतीय परंपरा में मनु संहिता, महाभारत, रामचरित मानस आदि ग्रंथों में भी है।

एवं सर्व धर्म समभाव का समर्थन करते हैं। जिसका अर्थ है कि राज्य को धर्मों से दूर नहीं भागना चाहिये बल्कि सभी धर्मों को बराबर मानना चाहिए।

कौटिल्य ने अपने सप्तांग सिद्धांत में स्वामी अर्थात राजा को ऐसा ही शासन चलाने की सलाह दी है।

- **उम्मीदवारों का चुनाव-** राजनीतिक दल चुनाव से पहले अपने उम्मीदवारों का चयन करते हैं ऐसा करते समय राजनीतिक दल उम्मीदवारों के धर्म तथा चुनाव क्षेत्र के लोगों के धर्म के प्रति विशेष ध्यान देते हैं यह भारतीय राजनीति पर सांप्रदायिक प्रभाव बताता है

- **धार्मिक अल्पसंख्यकों को संतुष्ट करने की नीति-** प्रत्येक दल बहुमत प्राप्त करना चाहता है इसलिए सभी राजनीतिक दल कुछ महत्वपूर्ण धार्मिक अल्पसंख्यकों को संतुष्ट करने का प्रयास करते हैं ताकि वे अधिक से अधिक मत प्राप्त कर सके इस प्रकार की गतिविधियां राजनीति को सांप्रदायिकता रंग देने के लिए उत्तरदायी होती है।

- **धर्म के आधार पर प्रतिनिधि-** प्रत्येक राजनीतिक दल उम्मीदवारों का चयन करते समय इस बात का प्रयास करते हैं कि विभिन्न धर्मों के लोगों को अपने उम्मीदवारों की सूची में शामिल करें, ताकि उन धर्मों के लोग उस दल को मत दे तथा संतुष्ट रहें।

➢**धर्म पर आधारित चुनाव विश्लेषण-** भारतीय राजनीति में धर्म के प्रभाव संबंधी तथ्य चुनाव विश्लेषण पत्रिकाओं में छपते हैं वे भी मुख्यत: धर्म एवं जाति पर आधारित होते हैं लेखक या विश्लेषणकर्ता चुनाव निष्कर्ष मतदाताओं के धर्म एवं उम्मीदवारों के धर्म के आधार पर ही निश्चित करता है।

➢**धार्मिक व सांप्रदायिक राजनीतिक दल-** स्वतंत्रता पूर्व ही भारत में धर्म के आधार पर राजनीतिक दलों का गठन होने लगा था जैसे मुस्लिम लीग,हिंदू महासभा आदि। धर्म के नाम पर भारत का विभाजन व धार्मिक सांप्रदायिकता को बढ़ावा देते रहे।

- **धार्मिक दबाव समूह-** धार्मिक संगठन भारतीय राजनीति में सशक्त दबाव समूह की भूमिका निभाते हैं यह समूह न केवल शासन की नीतियों को प्रभावित करते हैं बल्कि अपने पक्ष में अनुकूल निर्णय भी करवाते हैं।

- **पृथक राज्यों की मांग-** अप्रत्यक्ष रूप से धर्म के आधार पर पृथक राज्य की मांग भी की जाती है पंजाब में अकाली दल व नागालैंड के ईसाई समुदाय ने भी पृथक राज्य की मांग का आधार तैयार किया है।

- **मंत्रिमंडल का निर्माण-** केंद्र एवं राज्य के मंत्रिमंडल के निर्माण में भी हमेशा इस बात को ध्यान में रखा जाता है कि धार्मिक संप्रदायों के लोगों को उसमें प्रतिनिधित्व प्राप्त हो जाए।

भारतीय राजनीति में वर्ग की भूमिका

आधुनिक समाजों में सामाजिक स्तरीकरण का मुख्य आधार वर्ग ही है।

राबर्ट स्टीट का मानना है कि प्रत्येक समाज में वर्ग विभाजन या वर्ग निर्धारण के कुछ मुख्य आधार होते हैं

- संपत्ति, धन और आय
- परिवार एवं नातेदारी
- निवास की स्थिति
- निवास स्थान की अवधि
- व्यवसाय की प्रवृत्ति
- शिक्षा
- धर्म

- जहां जाति मनुष्य के जन्म का द्योतक है वही वर्ग उसकी सामाजिक स्थिति का द्योतक है।
- भारतीय राजनीति में वर्ग की भूमिका को निम्न बिंदुओं द्वारा समझा जा सकता है-

1. **राजनीतिक दलों का निर्माण-** भारतीय राजनीति में बहुत से राजनीतिक दलों का निर्माण वर्गीय आधार पर हुआ। उदाहरण के तौर पर साम्यवादी पार्टियां निर्माण के आधार पर मार्क्सवादी विचारधारा और सर्वहारा वर्ग का समर्थन कर रही है भारत के अन्य दल पूंजीवादी वर्ग से अपने को व्यवहारत: जोड़े रखते हैं।
2. **प्रत्याशियों का चयन-** चुनाव हेतु प्रत्याशियों के चयन में भी राजनीतिक दलों द्वारा वर्गीय दृष्टिकोण रखा जाता है। साम्यवादी पार्टियों को छोड़कर अन्य पार्टियां बुर्जुआ वर्ग को ही प्रत्याशी बनाती हैं स्पष्ट है कि चुनाव में तथाकथित साम्यवादी पार्टियों द्वारा अपने वर्ग को ही टिकट दिया जाता है।
3. **मत व्यवहार-** जब भारत में मत व्यवहार के उत्तरदायी तथ्यों का अवलोकन करते हैं तो पाते हैं कि एक तथ्य के रूप में वर्ग भी रहा है। पश्चिम बंगाल और केरल में स्पष्ट रूप से वर्ग के आधार पर ही मत का व्यवहार होता है ऐसे ही आंध्रप्रदेश के कुछ भागों में बिहार एवं झारखंड के कुछ भागों में मत व्यवहार का आधार वर्ग रहा है।

- **सरकारी निर्णय-** भारत में सरकार द्वारा लिए गए निर्णय को वर्गों के हित की पूर्ति से जोड़ा जा सकता है अभी तक केंद्र में जिस दल की सरकार रही है वह पूंजीपति वर्ग पर विशेष ध्यान देती रही हैं

- **राजनीतिक पुरस्कारों का वितरण-** भारत में अब तक के राजनीतिक पुरस्कारों के वितरण के इतिहास का व्यवहारिक अवलोकन करें तो पाते हैं कि कुछ सरकारों द्वारा कभी कभी वर्गीय अवधारणा को स्वीकार किया गया है केंद्र सरकार भी इस बात को ध्यान में रखकर ही राजनीतिक पद को प्रदान करती हैं।

भारतीय राजनीति में वर्ग की भूमिका की कमी के कारण

1. भारतीय समाज का विभिन्न संप्रदायों व जाति में बंटा होना।
2. सही रूप में मार्क्सवादी विचारधारा वाले राजनीतिक दलों का विकास ना होना।
3. सोवियत संघ का पतन हो जाना, इस घटना ने भी वर्ग की अवधारणा को हतोत्साहित किया है।
4. वर्ग के लोगों में ही परस्पर फूट।

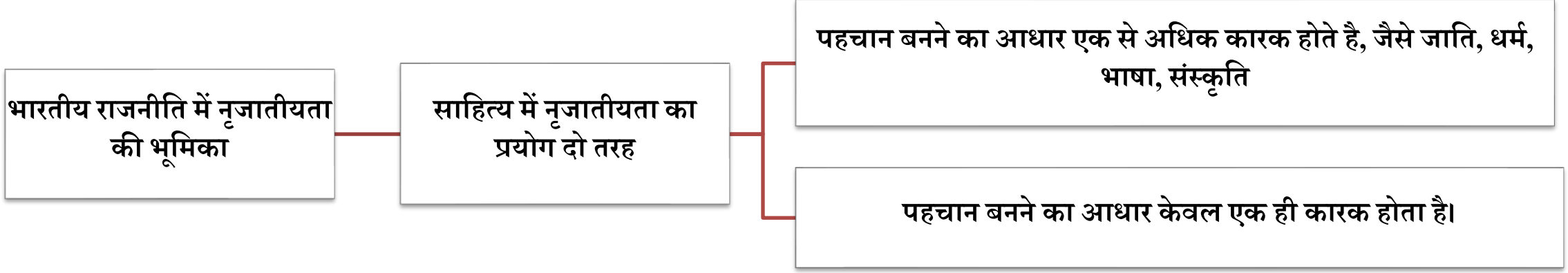

नृजातीयता न केवल चुनावों में ही नहीं बल्कि यह राजनीति दलों के गठन में भी भूमिका रखती है।

इनसाइक्लोपीडिया ऑफ सोशल साइंसेज ने नृजातीय की परिभाषा इस प्रकार दी है कि"नृजातीय समूह में हैं जो प्रजातीय, राष्ट्रीयता अथवा सांस्कृतिक आधार पर सामान्य समूह में बंधकर दूसरे समूह से अलग रहते हुए अपनी पृथक संस्कृति में रहते हैं।"

किसी भी नृजातीयता पार्टी की तीन प्रमुख विशेषताऐं होती है

(i) इसमें एक समूह का निर्माण किसी मौलिक कारक जैसे जाति के आधार पर होता है।

(ii) यह समूहों के सदस्यों को लाभबंद करती है तथा समूहों, बाहरी लोगों को लाभबंद नहीं करती है

(iii) तथा यह जातीय समूहों के हितों की ही महत्ता देती है।

नृजातीय समूह का वर्गीकरण
जाति के आधार पर
नस्ल के आधार पर
कबीलों की क्रियाविधि के आधार पर
धार्मिक कार्यप्रणालियों के आधार पर
भाषा के आधार पर

➢**जाति के आधार पर नृजातीय समूह-** एक जाति विशेष के सदस्य अपने आप को किसी विशेष जाति व जनजाति से संबंधित मानते हैं और अपने आप को दूसरे से अलग रखते हैं प्राचीनकाल से ही भारतीय समाज जाति के आधार पर बंटा हुआ है।

➢**नस्ल के आधार पर नृजातीय समूह-** प्राचीन भारतीय नस्लों भील, कोल, द्रविड़, संथाल और विदेशी नस्लों आर्य ,हूण, कुषाण ,मुस्लिम, मंगोल आदि नस्लों को शामिल करते हैं। नृजातीय समूह की उत्पत्ति में इन नस्लों ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है। आर्यों के आगमन के समय भारत में मुख्यत: चार नस्लें पाई जाती थी इन नस्लों ने अपने आपको आर्य नस्ल से बचाए रखा। अपने इतिहास और संस्कृति की रक्षा के लिए वे नस्लें मध्य भारत और दक्षिण भारत की तरफ चली गई वहीं इन्होंने अपनी संस्कृति का विकास किया।

- **धार्मिक कार्यप्रणालियों के आधार पर नृजातीय समूह-** धार्मिक आधार पर हिंदू ,मुस्लिम, ईसाई, सिख, बौद्ध, पारसी आदि धर्म से संबंधित व्यक्तियों को नृजातीय समूह कह सकते हैं, क्योंकि यह अपने आचार व्यवहार, रीति-रिवाजों, खानपान, रहन सहन ,संस्कृति आदि से एक दूसरे से लगभग अलग हैं इसलिए यह अपने आप को दूसरे धार्मिक समुदायों से पृथक रखते हैं।

- **भाषा के आधार पर नृजातीय समूह-** भाषा पर आधारित समूह जैसे कि बंगाली, तेलुगू ,तमिल ,कन्नड़,पंजाबी आदि को भी नृजातीय समूह कहा जाता है क्योंकि भाषाई समूह के लोग अपने आपको इन नृजातीय समूह से जुड़ा हुआ मानते हैं जैसे- सारे विश्व में फैले हुए सिक्ख अपने आपको सिक्खी, सिख धर्म, पंजाबी संस्कृति, पंजाबी भाषा और पंजाब से जुड़े हुए हितों को अपने से संबंधित मानते हैं।

- **कबीलों की क्रियाविधि के आधार पर नृजातीय समूह-** समाज शास्त्रियों का एक समूह कबीलो को भी नृजातीय समूह में शामिल करता है। यह कबीले अपनी नस्ल, जाति, भाषा ,संस्कृति के आधार पर अपने आपको अन्य कबीलों से पृथक रखते हैं इस तरह के कबीलों में हम बेबीलोन में रहने वाले यहूदी कबीलों को शामिल कर सकते हैं जिन्होंने अपनी संस्कृति, अपने इतिहास, कानून और परंपराओं द्वारा ऐसी संस्कृति विकसित कर ली है जो कि उन्हें एक साथ बांधे रखती हैं।

नृजातीय समूह का भारतीय राजनीति पर प्रभाव –

विश्व के लगभग सभी देश में नृजातीय समूह पाए जाते हैं नृजातीय समूह में पारंपरिक वैमनस्य के कारण हिंसा ,आतंक ,भय का वातावरण विकसित हुआ है जिसके कारण यह समूह कई तरह की समस्याएं पैदा कर देते हैं इन नृजातीय समूह में पाई जाने वाली हिंसा और पारंपरिक वैमनस्य unpleasantness भारत जैसे देश की राष्ट्रीय एकता और अखंडता के लिए एक चुनौती बन गए हैं।

जातिवाद- भारतीय राजनीति व मतदान व्यवहार को जाति बहुत प्रभावित करती हैं राजनीतिक शक्ति प्राप्ति के इच्छुक नेताओं ने जातियों को विशेष सुविधाएं प्रदान की है जाति का प्रभाव लोकतांत्रिक करण के कारण भी बड़ा है।

क्षेत्रवाद- एक नृजातीय समूह अपने एक क्षेत्र विशेष तक ही सीमित रहता है वे उसी क्षेत्र विशेष को अपना राज्य मानते हैं अतः नृजातीय समूह क्षेत्रवाद की भावना से प्रेरित होते हैं और इसी परिणाम स्वरूप वे अलगाववाद व नए राज्यों की मांग को बढ़ावा देते हैं।

क्षेत्रीय दलों का गठन- नृजातीय समूह अपने अधिकारों व संस्कृति की रक्षा हेतु क्षेत्रवाद की भावना से ओतप्रोत होकर क्षेत्रीय राजनीतिक दलों का गठन करते हैं जैसे पीपुल्स पार्टी ऑफ अरुणाचल, कुकी नेशनल असेंबली, मणिपुर पीपुल्स पार्टी, आदि महत्वपूर्ण है पूर्वोत्तर राज्यों में गठित राजनीतिक दल महत्वपूर्ण नृजातीय समूह है।

उग्रवाद संगठनों का निर्माण- नृजातीय समूह की उग्र भावनाएं उग्रवादी संगठनों को जन्म देती है इसी कारण पंजाब, जम्मू कश्मीर, असम, मणिपुर ,मिजोरम, नागालैंड, त्रिपुरा ,तमिलनाडु आदि राज्यों में उग्रवादी संगठन विद्यमान है इन उग्रवादी संगठनों में प्रमुख हैं- खालिस्तान लिबरेशन फोर्स, कश्मीर लिबरेशन फोर्स, यूनाइटेड लिबरेशन फ्रंट ऑफ असम, नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नागालैंड, पूरा नेशनल वॉलिंटियर आदि।

नृजातीय समूह का भारतीय राजनीति पर प्रभाव –

विश्व के लगभग सभी देश में नृजातीय समूह पाए जाते हैं नृजातीय समूह में पारंपरिक वैमनस्य के कारण हिंसा ,आतंक ,भय का वातावरण विकसित हुआ है जिसके कारण यह समूह कई तरह की समस्याएं पैदा कर देते हैं इन नृजातीय समूह में पाई जाने वाली हिंसा और पारंपरिक वैमनस्य unpleasantness भारत जैसे देश की राष्ट्रीय एकता और अखंडता के लिए एक चुनौती बन गए हैं।

जातिवाद- भारतीय राजनीति व मतदान व्यवहार को जाति बहुत प्रभावित करती हैं राजनीतिक शक्ति प्राप्ति के इच्छुक नेताओं ने जातियों को विशेष सुविधाएं प्रदान की है जाति का प्रभाव लोकतांत्रिक करण के कारण भी बड़ा है।

क्षेत्रवाद- एक नृजातीय समूह अपने एक क्षेत्र विशेष तक ही सीमित रहता है वे उसी क्षेत्र विशेष को अपना राज्य मानते हैं अतः नृजातीय समूह क्षेत्रवाद की भावना से प्रेरित होते हैं और इसी परिणाम स्वरूप वे अलगाववाद व नए राज्यों की मांग को बढ़ावा देते हैं।

क्षेत्रीय दलों का गठन- नृजातीय समूह अपने अधिकारों व संस्कृति की रक्षा हेतु क्षेत्रवाद की भावना से ओतप्रोत होकर क्षेत्रीय राजनीतिक दलों का गठन करते हैं जैसे पीपुल्स पार्टी ऑफ अरुणाचल, कुकी नेशनल असेंबली, मणिपुर पीपुल्स पार्टी, आदि महत्वपूर्ण है पूर्वोत्तर राज्यों में गठित राजनीतिक दल महत्वपूर्ण नृजातीय समूह है।

उग्रवाद संगठनों का निर्माण- नृजातीय समूह की उग्र भावनाएं उग्रवादी संगठनों को जन्म देती है इसी कारण पंजाब, जम्मू कश्मीर, असम, मणिपुर ,मिजोरम, नागालैंड, त्रिपुरा ,तमिलनाडु आदि राज्यों में उग्रवादी संगठन विद्यमान है इन उग्रवादी संगठनों में प्रमुख हैं- खालिस्तान लिबरेशन फोर्स, कश्मीर लिबरेशन फोर्स, यूनाइटेड लिबरेशन फ्रंट ऑफ असम, नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नागालैंड, पूरा नेशनल वॉलिंटियर आदि।

सांप्रदायिकता- भारत में धार्मिक आधार पर हिंदू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई आदि नृजातीय समूह है इन समूह ने उग्र रूप धारण करके सांप्रदायिकता की समस्या को विकसित किया है। भारत में राजनीति को सांप्रदायिकता का आधार देकर राष्ट्र में अराजकता की स्थिति पैदा करने की कोशिश की जा रही है।

राजनीतिक शक्ति की प्राप्ति की मांग- क्षेत्रवाद की भावना से प्रेरित होकर नृजातीय समूह राजनीतिक शक्ति की प्राप्ति की मांग करते हैं यह राजनीतिक मांगे कई तरह की होती हैं जैसे कि पृथक राज्य की मांग ,पूर्ण राज्य की मांग, अंतर्राज्यीय विवाद, राज्यों के लोगों के हितों की रक्षा के लिए आंदोलन आदि।

छात्र संगठनों का निर्माण- नृजातीय समूह की भावना से प्रेरित होकर भारत के पूर्वोत्तर राज्यों में कई छात्र संगठनों का निर्माण किया गया है जैसे ऑल असम स्टूडेंट्स यूनियन, अरुणाचल प्रदेश छात्र यूनियन आदि यह संगठन सामाजिक ,आर्थिक भावनाओं से प्रेरित होते हैं जैसे- वर्तमान में बोडो छात्र परिषद बोडोलैंड की मांग के लिए संघर्ष कर रही हैं।

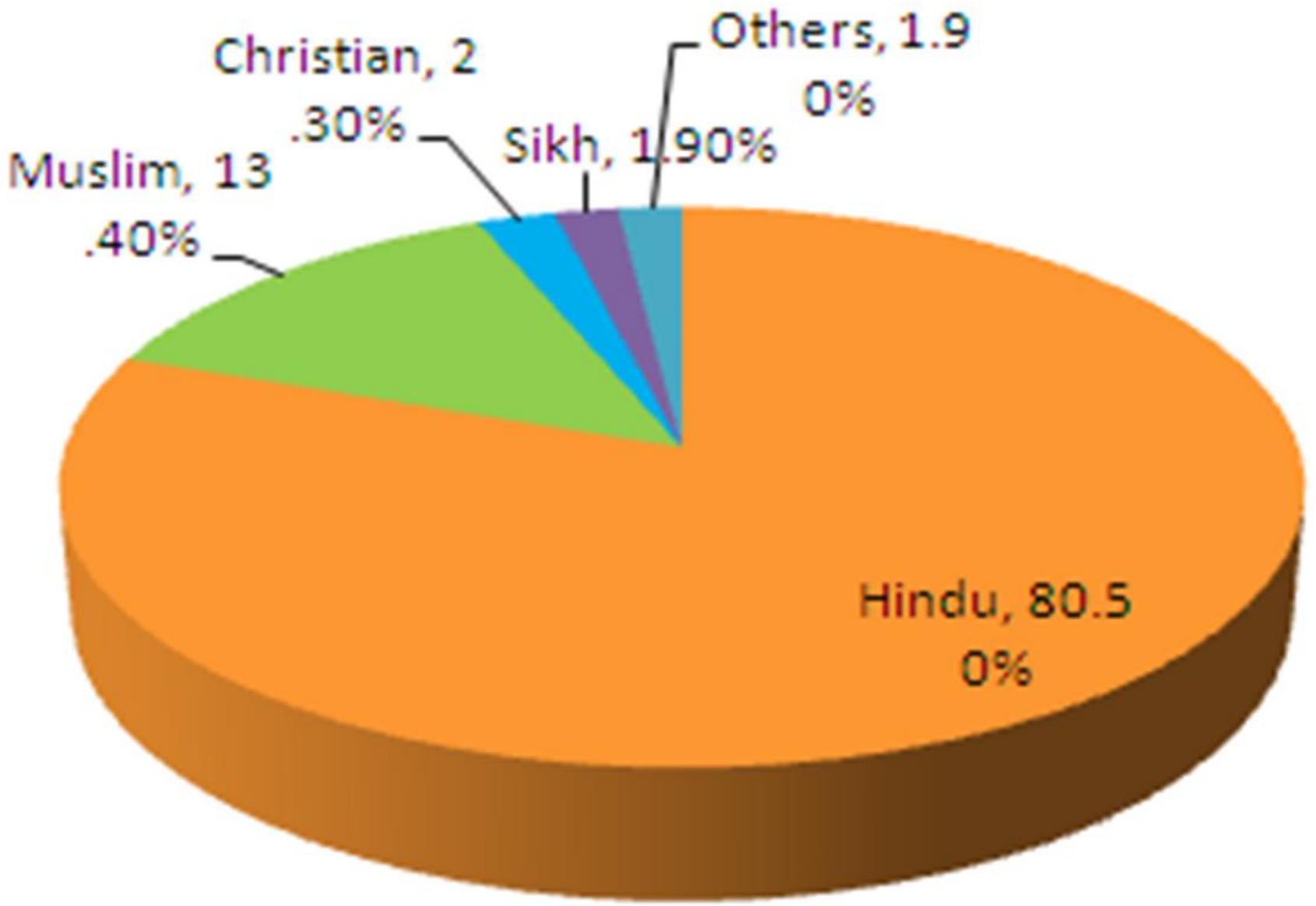
Christian, 2
.30%
Others, 1.9
0%
Sikh, 1.90%
Muslim, 13
.40%
Hindu, 80.5
0%

- **हिंसक आंदोलन-** नृजातीय समूह अपनी मांगों अधिकारों आदि की प्राप्ति के लिए हिंसक आंदोलन का सहारा भी लेते हैं मिजो नेशनल फ्रंट मे लालडेंगा के नेतृत्व में स्वतंत्र मिजोरम के लिए अपनी आतंकवादी गतिविधियां जारी रखी जो कि जून 1986 तक जारी रही मिजों लोगों की तरह असम के नागा पहाड़ी क्षेत्रों में रहने वाले लोगों ने स्वतंत्र राज्य की मांग की, नागाओं ने अपनी मांगें पूरी करवाने के लिए हिंसक तथा अराजकता की कार्यवाही की जिससे वहां सेना को बुलाना पड़ा।

नृजातीय भारतीय अखंडता के समक्ष चुनौती के रूप में

- नृजातीय समूह भारत की आंतरिक सुरक्षा एवं अखंडता के समक्ष एक चुनौती पेश करते हैं। नृजातीय समूह के कई संगठन अपनी मांगों को लेकर बहुत उग्र तरीके अपनाते हैं खास तौर पर भारत के उत्तर पूर्वी में कार्यरत अनेकों संगठन जैसे-नागा, बोडो जाति के संगठन आदि।

समाधान

1) राष्ट्रीय भावना का विकास हो।

2) शिक्षा व जागरूकता में वृद्धि हो।

3) नैतिक मूल्यों का विकास हो।

4) सभी समूह को राष्ट्रीय विकास में भागीदारी मिले।

5) सरकार व राजनीतिक दल सम्मिलित होकर कार्य करें आदि।

भाषा

भारत एक बहुभाषी देश है। यहां अनेक भाषाएं एवं बोलियां बोली जाती हैं इनमें से 22 भाषाएं संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल की गई हैं। भाषा लोगों के बीच में संचार का प्रमुख साधन है। 1950 से 1960 के बीच राजनीति का प्रमुख मुद्दा भाषा ही था।

भाषाई आधार पर समस्त विवादों के निवारण के लिए एक ऐसी संपर्क भाषा की जरूरत है जो कि विभिन्न भाषा भाषी व्यक्तियों को एकता के सूत्र में बांध सकें। राजनीतिक एकता के साथ-साथ भाषा की एकता लोकतंत्र के लिए जरूरी है।

दुनिया में शीर्ष 10 सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषाएँ

लाखों में वक्ता

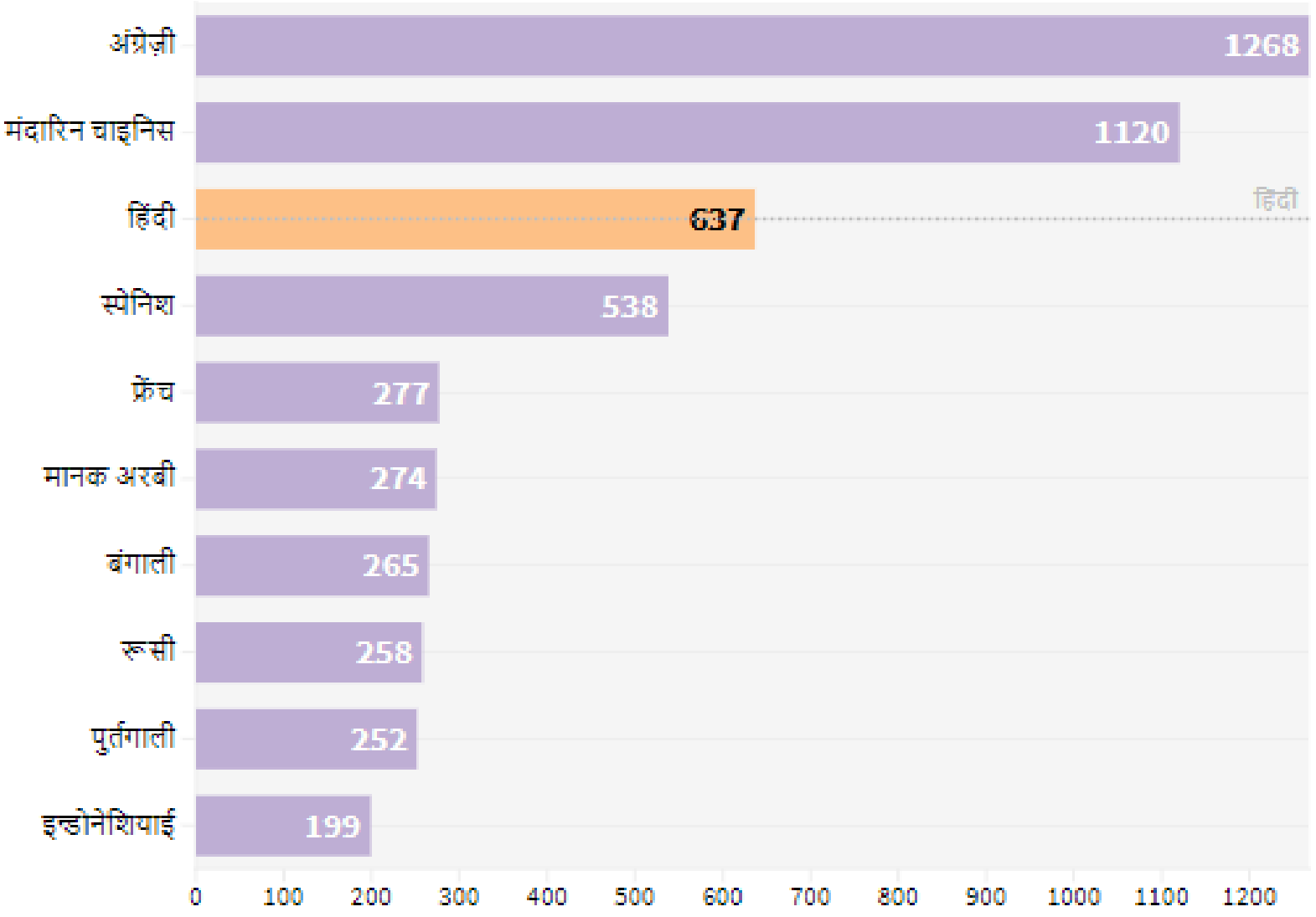

- संघ की भाषा
  - संसद् में प्रयोग की जाने वाली भाषा(अनुच्छेद 120)
  - विधान-मंडल में प्रयोग की जाने वाली भाषा(अनुच्छेद 210)
  - संघ की राजभाषा(अनुच्छेद 343)
  - राजभाषा के संबंध में आयोग और संसद की समिति(अनुच्छेद 344)
- प्रादेशिक भाषाएं
  - राज्य की राजभाषा या राजभाषाएं(अनुच्छेद 345)
  - एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच या किसी राज्य और संघ के बीच पत्रादि की राजभाषा(अनुच्छेद 346)
  - किसी राज्य की जनसंख्या के किसी भाग द्वारा बोली जाने वाली भाषा के संबंध में विशेष उपबंध(अनुच्छेद 347)

- उच्चतम न्यायालय, उच्च न्यायालयों आदि की भाषा
  - उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों में और अधिनियमों, विधेयकों आदि के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा(अनुच्छेद 348)
  - भाषा से संबंधित कुछ विधियां अधिनियमित करने के लिए विशेष प्रक्रिया(अनुच्छेद 349)
- विशेष निदेश

  क. प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की सुविधाएं(अनुच्छेद 350)

  ख. भाषाई अल्पसंख्यक-वर्गों के लिए विशेष अधिकारी(अनुच्छेद 350)

  हिंदी भाषा के विकास के लिए निदेश(अनुच्छेद 351)
- राजभाषा अधिनियम, 1963
- राजभाषा संकल्प, 1968

➢भारतीय राजनीति में भाषा की भूमिका

➢भाषागत होना कोई नकारात्मक नहीं है यद्यपि भाषागत विविधता से एकता बढ़ाने में थोड़ी समस्या होती हैं

➢किंतु यदि एक ऐसे संपर्क भाषा हो जो विविध भाषा भाषी लोगों को एक सूत्र में बांधे रखें तो यह समस्या आसानी से दूर हो सकती हो किंतु ऐसा हुआ नहीं और भाषा का प्रश्न राजनीति का प्रश्न बन गया।

➢भाषा को आधार बनाकर राजनीतिक दलों एवं राजनीतिकारों ने सामान्य जनता को भी उत्तेजित करने का प्रयास किया और स्थिति ऐसी उत्पन्न हो गई कि ऐसा अनुभव होने लगा कि कहीं भाषा का प्रश्न हमारी राष्ट्रीय एकता को खंडित ना कर दे। भाषा भारतीय राजनीति में निम्नलिखित प्रकार से भूमिका निभाती है

1. भाषा के आधार पर राज्यों का पुनर्गठन- सन 1952 में तेलुगु भाषी लोगों में प्रथक तेलुगु भाषा राज्य के लिए आंदोलन तीव्र हो गया और यह आंदोलन इतना तीव्र था कि प्रधानमंत्री नेहरु को भाषा के आधार पर राज्यों का निर्माण करना पड़ा।

2. हिंदी भाषा विरोधी राजनीति- कुछ लोगों का कहना था कि अंग्रेजी के स्थान पर हिंदी को प्रतिस्थापित करने में जल्दी करने का तात्पर्य होगा अहिंदी भाषा जनता पर हिंदी थोपना। संविधान निर्माताओं ने तब यह निर्णय लिया कि जब तक हिंदी पूर्णता विकसित नहीं हो जाती सरकारी भाषा के रूप में अंग्रेजी ही प्रयुक्त होगी और भारत सरकार हिंदी भाषा के विकास एवं विस्तार के लिए कार्य करती रहेगी।

परंतु स्वतंत्रता के लगभग 70 वर्ष गुजर जाने के बावजूद भी हिंदी सरकारी भाषा नहीं बन पाई वर्तमान में नरेंद्र मोदी के नेतृत्व वाली सरकार ने वर्ष 2014 में सर्कुलर जारी कर सभी मंत्रालयों, पी.एस.यू. और बैंकों को अपने सोशल मीडिया अकाउंट्स पर हिंदी को प्राथमिकता देने की बात कही थी, तब भी राजनीतिक दलों ने इसका तीव्र विरोध किया। पश्चिम बंगाल और तमिलनाडु की सरकार तो हिंदी भाषा का विरोध कर हमेशा भाषा की राजनीति करती दिखाई देती है।

3. **राज्यों में भाषाई विवाद-** भाषा के आधार पर राज्यों का पुनर्गठन होने के बावजूद राज्यों के अंतर्गत एवं सीमा पर भाषाएं विवाद देखने को मिलता है जैसे-महाराष्ट्र और कर्नाटक सीमा पर स्थित बेलगांव, असम में बंगाली और असमी भाषा को लेकर भी हमेशा उग्र विवाद देखने को मिलते हैं राजनीतिक दल इसका लाभ उठाने के लिए ऐसे विरोध को और उग्र कर देते हैं।

4. **अन्य भाषाओं की मान्यता की राजनीति-** संविधान की आठवीं अनुसूची में 22 प्रमुख भाषाओं को मान्यता प्रदान की गई है उसके बावजूद मांग थमी नहीं, यह दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है लोग कई क्षेत्रीय भाषाओं को आठवीं अनुसूची में शामिल करने की मांग कर रहे हैं जैसे-भोजपुरी, मंडारी आदि।

5. **भाषाई अल्पसंख्यकों की राजनीति-** भाषाई आधार पर अनेक राज्यों के निर्माण के बावजूद भाषाई अल्पसंख्यकों की समस्या भी वैसी ही बनी हुई है। यह अल्पसंख्यक वर्ग अनेक प्रकारों से अपने भाषाई संरक्षण की मांग कर रहे हैं जैसे-उत्तर प्रदेश और बिहार में उर्दू, कर्नाटक में मराठी, पंजाब में हिंदी आदि राज्यों में भाषाई अल्पसंख्यकों की समस्या विद्यमान है और यह यहां स्थानीय राजनीति में अहम भूमिका निभाती है।

6. **भाषा के आधार पर मतदान व्यवहार-** भारत में मतदान व्यवहार भी भाषा के आधार पर किया जाता है लोग उसी पार्टी को मत देते हैं जो उनकी भाषा से संबंधित हो या उनकी भाषा की उन्नति के संबंध कार्यरत हैं।

इस प्रकार भाषा संबंधी विवाद ने भारत की राष्ट्रीय एकता को दुष्ट प्रभावित किया है और इसने देश के समक्ष प्रशासनिक समस्या भी उत्पन्न की है। ऐसे अनेक अवसरों पर राजनीतिक दलों ने भाषा की समस्या से राजनीतिक लाभ उठाने की प्रयत्न किए और वर्तमान में भी ऐसी प्रवृत्ति देखी जा रही है।

लैंगिक आधार पर श्रम का विभाजन; समाज में आज भी दिखाई देता है। अधिकांश घरों में चूल्हा-चौका और साफ सफाई के काम महिलाओं द्वारा या उनकी देखरेख में नौकरों द्वारा किये जाते हैं। घर के बाहर के काम पुरुषों द्वारा किये जाते हैं। सार्वजनिक जीवन पर अक्सर पुरुषों का वर्चस्व रहता है।

नारीवादी आंदोलन: जो आंदोलन महिलाओं को समान अधिकार दिलाने के उद्देश्य से किये जाते हैं उन्हें नारीवादी आंदोलन कहते हैं।

सार्वजनिक जीवन में महिलाओं की स्थिति में काफी सुधार हुआ है। भारत का समाज एक पितृ प्रधान समाज है। फिर भी आज महिलाएँ कई क्षेत्रों में आगे बढ़ रही हैं।

- पुरुषों की साक्षरता दर 76% है, जबकि महिलाओं की साक्षरता दर केवल 54% है।
- ऊँचे पदों पर बहुत कम महिलाएँ देखने को मिलती हैं। कई जगह पर पुरुषों की तुलना में महिलाओं का वेतन कम होता है। पुरुषों की तुलना में महिलाओं को प्रतिदिन अधिक घंटे काम करना पड़ता है।
- कन्या भ्रूण हत्या के कई मामले सामने आते हैं। इसलिए भारत का लिंग अनुपात महिलाओं के पक्ष में बिलकुल नहीं है।
- महिलाओं पर होने वाले अत्याचार के मामले बढ़ते ही जा रहे हैं। ऐसी घटनाएँ घर में भी होती हैं और घर के बाहर भी होती हैं।

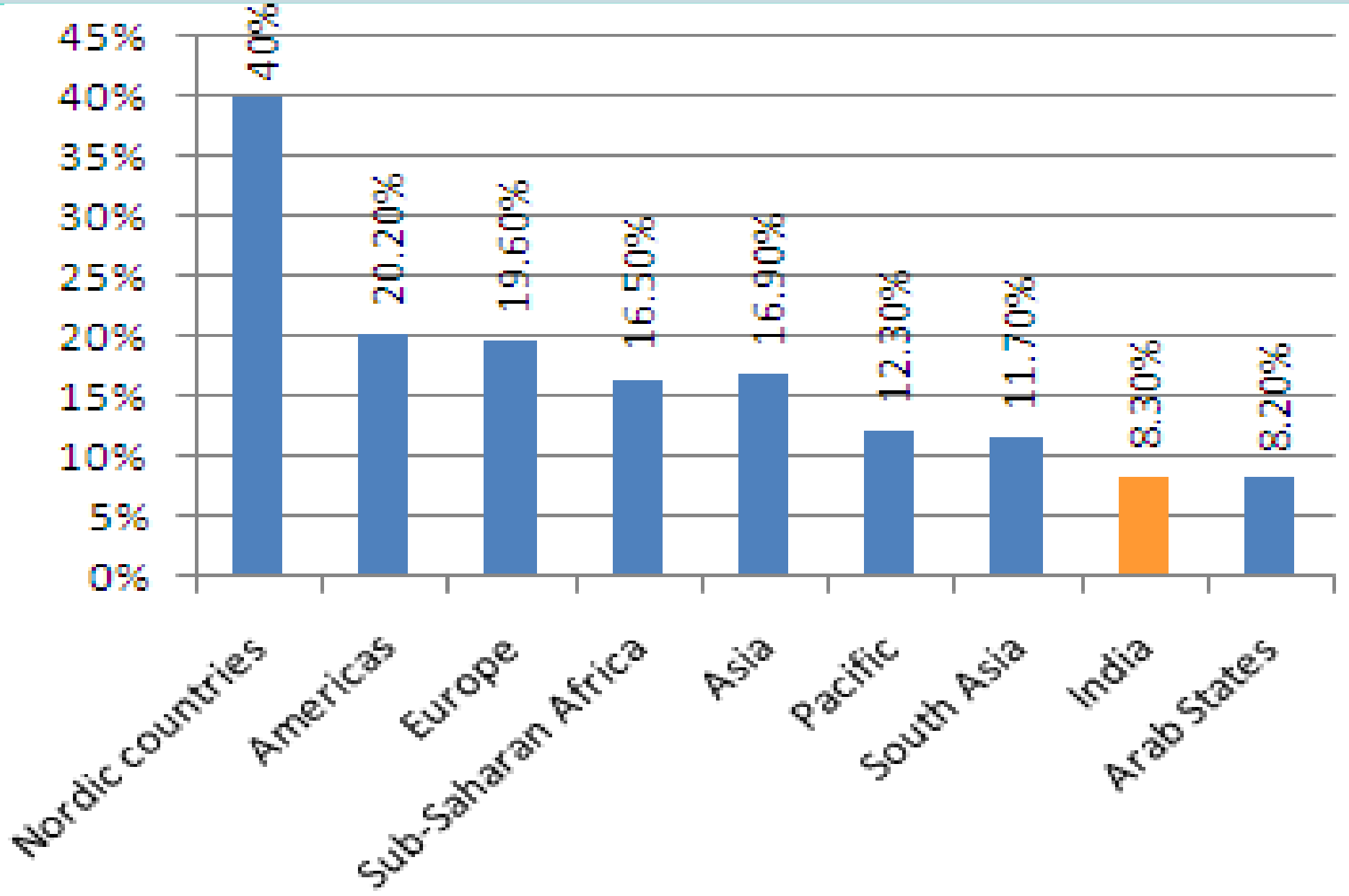
45%
40%
35%
30%
25%
20%
15%
10%
5%
0%
40%
20.20%
19.60%
16.50%
16.90%
12.30%
11.70%
8.30%
8.20%
Nordic countries
Americas
Europe
Sub-Saharan Africa
Asia
Pacific
South Asia
India
Arab States

- **महिलाओं का राजनीति में प्रतिनिधित्व**
- **भारतीय राजनीति में कई महिलाएँ प्रखर राजनेता हैं, लेकिन राजनीति में महिलाओं का प्रतिनिधित्व बहुत ही खराब है।**
- **विधायिकाओं और मंत्रीमंडल में महिलाओं की संख्या बहुत कम है।**
- **इस स्थिति को सुधारने के लिये स्थानीय स्वशासी निकायों की एक तिहाई सीटों को महिलाओं के लिये आरक्षित रखा गया है।**
- **लेकिन संसद और विधानसभाओं में अभी तक महिलाओं को आरक्षण नहीं मिल पाया है।**

महिलाओं की राजनीति में कम भागीदारी के कारण

1. सामाजिक-आर्थिक कारण
2. राजनैतिक जागरूकता की कमी
3. राजनैतिक शिक्षा की कमी
4. वित्त की कमी
5. पितृसतात्मक समाज
6. घरेलू जिम्मेदारियां
7. व्यक्तिगत कारण
8. सास्कृतिक प्रतिबंध एवं रूढिबाद

- संसद के निचले सदन (Lower House-भारत में लोकसभा) की बात है तो महिला सांसदों के प्रतिशत के मामले में भारत विश्व में 193 देशों में 153वें स्थान पर है।
- अफ्रीकी देश रवांडा में हैं सबसे अधिक महिला सांसद
- महिला आरक्षण विधेयक, 2008 (108वाँ संविधान संशोधन विधेयक) को राज्यसभा ने 9 मार्च 2010 को पारित किया था, लेकिन 9 साल बीतने के बाद भी यह लोकसभा से पारित नहीं हो पाया है। लोकसभा का कार्यकाल पूरा हो जाने की वज़ह से यह विधेयक रद्द हो जाता है। इस विधेयक में महिलाओं के लिये लोकसभा और विधानसभाओं में 33 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान है।
- मध्यप्रदेश विधान सभा में 2018 में कुल 230 सीटों में 21 महिला प्रतिनिधित्व 9.13 प्रतिशत है

मत व्यवहार

मत डालने के तरीकों या उन कारकों को बताता है जो वोट देने में लोगों को प्रभावित करते हैं। मतदान व्यवहार का अध्ययन मतदान के आँकड़ों, चुनावी आँकड़ों के रिकार्ड या अवलोकन तक सीमित नहीं है।

यह मतदाताओं के अनुभव, भावना आदि के मनोवैज्ञानिक पहलुओं और राजनीतिक कार्यवाही और संस्थागत ढाँचे के साथ उनके संबंधों को भी शामिल करता है।

मतदान व्यवहार की परिभाषाएं

ग्रेवियाल ए आमण्ड के अनुसार- "यह राजनीतिक उद्देश्य की तरफ निश्चित राजनीतिक अनुज्ञापन है। जैसे नेतृत्व, नीतियां और मुद्दे।"

एच. एपिलवी के अनुसार-"मतदान व्यवहार नागरिकों का सरकार से प्रत्यक्ष संबंध को दर्शाता है।"

कार्ल जे. फ्रेडरिक के अनुसार- "यह प्रजातांत्रिक शासन को वैधता प्रदान करने की प्रकिया है।"

भारत में मतदान व्यवहार के अध्ययन की उत्पत्ति

मत व्यवहार का अध्ययन चुनाव अध्ययनों का एक हिस्सा है। चुनावों के अध्ययन के विषय को सेफोलोजी कहते हैं।

इसका उद्देश्य चुनावों के दौरान मतदाताओं के व्यवहार के बारे में प्रश्नों का विश्लेषण करना और उनको समझना होता हैं।

मतदान के निर्धारकों के संबंध में अध्ययन किया जाता है।

भारत में राजनीतिक विद्वान, समाजशास्त्री, मानवविज्ञानी, मीडिया हाउस और राजनीतिक दल चुनावी अध्ययनों में लगे हुए हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में 1951-52 के प्रथम आम चुनावों के समय से 1950 के दशक से चुनाव अध्ययन शुरू हुए थे।

लेकिन व्यवस्थित तरीके से चुनावी अध्ययन 1960 के दशक से शुरू हुये।

रजनी कोठारी और मायरन वीनर जैसे राजनीतिक वैज्ञानिकों ने इसका आरंभ किया था।

मतदान व्यवहार

- **पॉल एच. एपल बी के अनुसार**

  मतदान व्यवहार व्यक्तियों का सरकार से सीधा संबंध है।

मतदान व्यवहार:-

1) मतदान में प्रभावी सहभागिता।
2) लोकतंत्र का सशक्त हथियार।

मतदान व्यवहार का महत्व :

(i) यह राजनीतिक सामाजीकरण की प्रक्रिया को समझने में सहायक होताहै।

(ii) आमजनों में भी लोकतंत्र के अन्त: स्थितिकरण की जांच करने मेंसहायक होता है।

(iii) राजनीतिक प्रक्रिया में सहभागिता का समावेश कर राजनीतिक समुदायको एकजुट रखना।

(iv) निर्णय निर्माण की क्रिया को दर्शाता है।

मतदान व्यवहार प्रभावित और निर्धारित करने वाले कारक

जाति (caste): समाज में आधुनिकता आने के बावजूद भी जाति; वोट देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आज भी कुछ राजनीतिक दल अपनी चुनावी रणनीति बनाते समय जाति के कारक को ध्यान में रखते हैं। वे किसी खास जाति बाहुल्य क्षेत्र से अधिक वोट प्राप्ति हेतु उसी जाति का उम्मीदवार बनाते है

रजनी कोठारी के अनुसार – "भारतीय राजनीति जातिवादी है तथा जाति राजनीतिकृत है।

पॉल ब्रास ने कहा है "स्थानीय स्तर पर देहात में मतदान व्यवहार का सबसे महत्वपूर्ण कारक जातीय एकता है। ऐसे राजनीतिक दल को समर्थन देती है जिनसे उनकी जाति के सदस्य अपनी पहचान स्थापित करते हैं।"

➢ **धर्म (religion):** धार्मिक पक्ष प्रबल है राजनीतिक दल सांप्रदायिक प्रचार में शामिल होते हैं और मतदाताओं की धार्मिक भावनाओं का शोषण करते हैं। अनेक सांप्रदायिक पार्टियों के होने से धर्म का भी राजनीतिकरण हुआ है। भारत एक धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र होते हुए भी दल चुनावी राजनीति में धर्म के प्रभाव की अवहेलना नहीं करते।

➢ **भाषा (language):** आंध्रप्रदेश राज्य भी भाषा के आधार पर ही अलग हुआ था। चुनाव के दौरान राजनीतिक दल लोगों की भाषायी भावनाएं उभारकर उनके निर्णय को प्रभावित करते हैं।

➢ **धन (money):** चुनावी खर्चों पर नियंत्रण के बावजूद करोड़ों रुपये खर्च किए जाते हैं। मतदाता अपने मत के बदले पैसा या शराब या कोई और वस्तु चाहता है। कई बार ये देखा जाता है कि मतदाता किसी और से पैसे लेकर किसी और को वोट दे देते हैं, या फिर धन प्राप्ति के प्रभाव से अचानक से रातों-रात जन भावनाएं बदल जाती है और लोग मतदान दिवस के दिन किसी और को वोट डाल कर आ जाते हैं।

- **क्षेत्र (region):** क्षेत्रीय दल; क्षेत्रीय भावनाओं के आधार पर मतदाताओं से मत की अपील करते हैं। किसी क्षेत्र विशेष में ये अपना प्रभुत्व स्थापित कर लेते है और कभी-कभी अलगाववाद को भी फैलाते हैं।
- **व्यक्तित्व (individuality):** जैसे कि – जवाहर लाल नेहरु, इंदिरा गाँधी, राजीव गाँधी, जयप्रकाश नारायण, अटल बिहारी वाजपेयी तथा नरेन्द्र मोदी की छवि ने मतदाताओं को उनके दलों अथवा उनके द्वारा समर्थित दलों के पक्ष में मत देने के लिए प्रभावित किया।
- **पॉल ब्रास ने कहा ,** "वेब इलेक्सन वह है जिसमें मतदाताओं के बीच एक ही दिशा में एक प्रवृत्ति बननी शुरू होती है जो कि किसी एक राष्ट्रीय दल अथवा उसके नेता के पक्ष में होती है। यह किसी एक मुद्दे पर अथवा अनेक मुद्दों पर आधारित होती है।" जैसे कि मोदी लहर आदि।
- **एंटी-इंकम्बेन्सी फैक्टर (Anti-incumbency factor):** सत्ताधारी दल के कार्य प्रदर्शन से असंतोष। ये असंतोष कई कारणों से उभरता है, जैसे कई टर्म तक सत्ता में रहना, घोषित वादों को पूरा न कर पाना, आदि।

विचारधारा (ideology): कुछ लोग समाज में कुछ विचारधाराओं, जैसे – साम्यवाद, पूँजीवाद, लोकतंत्र, धर्मनिरपेक्षता, देशभक्ति तथा विकेन्द्रीकरण आदि के अनुसार अपने कार्यों को करते हैं। ऐसे लोग उन्हीं दलों के उम्मीदवारों को मत देते हैं जो उनकी विचारधारा से मिलती जुलती हो

अन्य कारक (other factors): जैसे कि – चुनाव पूर्व घटी कुछ राजनीतिक घटनाएँ, उदाहरण के युद्ध, किसी नेता की हत्या, भ्रष्टाचार की अपकीर्ति आदि। 2019 में लोकसभा चुनाव से पूर्व हुए बालाकोट एयर स्ट्राइक से मतदाताओं के व्यवहार में विजयी पार्टी को लेकर सकारात्मक परिवर्तन आया था।

भावनात्मक जुड़ाव (Emotional connection) जो लोग किसी दल के साथ अपनी पहचान जोड़ते हैं, वे लाख कमियों एवं खूबियों के बावजूद उसी दल के लिए मतदान करेंगे। इसके अलावा मीडिया की भूमिका, परिवार की भूमिका, व्यक्तिगत हित, आदि भी ऐसे ही कारक है। यहाँ मीडिया की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण होती है,

चुनाव सुधार और समितियाँ

- दिनेश गोस्वामी समिति - चुनाव सुधार पर
- वोहरा समिति - राजनीति के अपराधीकरण पर
- इंद्रजीत गुप्ता समिति - चुनावों के राज्य वित्तपोषण पर बनी।
- एमएन वैंकट चलैया समिति- विधि आयोग, चुनाव आयोग, संविधान की समीक्षा के लिये राष्ट्रीय आयोग की रिपोर्ट
- वीरप्पा मोइली समिति - शासन में नैतिकता पर बनी
- एपी शाह समिति- विधि आयोग की रिपोर्ट पर बनी

हालाँकि सरकार ने इन सिफारिशों को केवल आंशिक रूप से स्वीकार किया है।

चुनाव एवं मतदान व्यवहार में मीडिया की भूमिका

सूचना प्रसार (information dissemination):– चुनाव की घोषणा, नामांकन, जाँच, चुनाव अभियान, सुरक्षा व्यवस्था, चुनाव कब, मतगणना तथा परिणाम की घोषणा, उम्मीदवारों की शैक्षणिक एवं आर्थिक स्थिति तथा उनकी आपराधिक पृष्ठभूमि संबंधी सूचनाओं आदि सबको व्यापक स्तर पर प्रचार-प्रसार की जरुरत होती है

आदर्श आचार संहिता एवं अन्य क़ानूनों के क्रियान्वयन पर नजर रखना:- ये राजनैतिक दलों एवं उसके उम्मीदवारों पर नजर बनाए रखते हैं और किसी भी प्रकार के अनैतिक गतिविधियों एवं लागू नियम-कानूनों की अवहेलना पर तुरंत रिपोर्ट करते है।

➢जन-प्रतिनिधित्व अधिनियम 1951 की धारा 126A के तहत मीडिया एक्ज़िट पोल तथा परिणामों को प्रथम चरण के चुनाव शुरू होने के पहले और अंतिम चुनाव के सम्पन्न होने के आधा घंटा के बाद तक प्रसारित नहीं कर सकता है।

➢**सरकारी मीडिया की भूमिका:-** मान्यता प्राप्त राष्ट्रीय एवं राज्यस्तरीय दलों को नि:शुल्क प्रसारण समय प्रदान किया जाता है ताकि चुनाव प्रचार-प्रसार के मामले में बराबरी के आधार पर लड़ा जा सके। इसके अलावा मतदाता जागरुकता प्रसार में भी प्रसार भारती अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

➢**मतदाता शिक्षण एवं सहभागिता को सुनिश्चित करना :-** चुनाव संबंधी समस्याएँ होती है जैसे कि मतदाता सूची में नाम जोड़ने, पहचान पत्र, मतदान केंद्र, EVM का उपयोग आदि। हालांकि चुनाव आयोग बड़े पैमाने पर अलग-अलग माध्यमों से इन सब से संबन्धित जागरूकता अभियान चलाता है पर चूंकि मीडिया की पहुँच बहुत ही व्यापक होती है

सन् 2000 के बाद का चुनाव सुधार

1. एक्ज़िट पोल पर प्रतिबंध

जन प्रतिनिधित्व अधिनियम 1951 के तहत चुनाव आयोग ने मतदान शुरू होने से लेकर मतदान समाप्त होने के आधे घंटे बाद तक एक्ज़िट पोल को प्रतिबंधित कर दिया है।

लोकसभा और राज्य विधानसभाओं में चुनाव के दौरान एक्ज़िट पोल के परिणाम प्रकाशित करने पर दो वर्ष का कारावास या जुर्माना अथवा दोनों सज़ा हो सकता है।

2. चुनावी खर्च पर सीलिंग

लोकसभा सीट के लिये चुनावी खर्च की सीमा को बढ़ाकर बड़े राज्यों में 70 लाख कर दिया गया है वहीं छोटे राज्यों में यह सीमा 28 लाख तक है।

3. पोस्टल बैलेट के माध्यम से मतदान

सरकारी कर्मचारियों और समस्त बलों को चुनाव आयोग की सहमति के बाद पोस्टल बैलेट के माध्यम से मतदान करने की अनुमति है।

विदेशों में रहने वाले ऐसे भारतीय नागरिकों को मतदान का अधिकार है जिन्होंने किसी अन्य देश की नागरिकता हासिल नहीं की है और उनका नाम किसी भी निर्वाचन क्षेत्र की मतदाता सूची में दर्ज हो।

4. जागरूकता और प्रसार

युवा मतदाओं को चुनावी प्रक्रिया में भाग लेने के लिये प्रोत्साहित करने हेतु भारत सरकार हर वर्ष 25 जनवरी को राष्ट्रीय मतदाता दिवस के रूप में मनाती है। यह 2011 से शुरू हुआ।

20,000 रुपए से अधिक राजनीतिक चंदे की चुनाव आयोग को जानकारी देना।

5. नोटा

2013 से नोटा व्यवस्था लागू करना। अहम चुनाव सुधार माना जाता है। नोटा का मतलब है उपरोक्त में से कोई नहीं। यानी नन ऑफ द एबव (None of the above)।

यह व्यवस्था मतदाता को किसी भी उम्मीदवार के पक्ष में वोट नहीं देने और मतदाता की पंसद को रिकॉर्ड करने का विकल्प देती है।

27 सितंबर, 2013 को सर्वोच्च न्यायालय ने नोटा की शुरुआत करने का निर्देश दिया ताकि मतदाता सभी उम्मीदवारों को अस्वीकार करने के अधिकार का प्रयोग कर सकें। लेकिन नोटा का चुनाव परिणामों पर कोई असर नहीं पड़ता।

2013 से 2016 के बीच हुए विभिन्न राज्यों के संघीय चुनाव में नोटा के तहत औसतन 2 प्रतिशत वोट पड़े।

निष्कर्ष - साफ-सुथरे चुनावों और राजनीतिक पारदर्शिता से ही लोकतंत्र को वैधता मिलती है। ऐसे में महत्त्वपूर्ण चुनावी सुधारों को लागू कराना बहुत ज़रूरी है ताकि लोकतांत्रिक भारत भ्रष्टाचार और आपराधिक माहौल से मुक्त होकर विकास और समृद्धि की ओर अग्रसर हो सके।

सिविल सोसाइटी

सिविल सोसाइटी (नागरिक समाज) का अर्थ और प्रकृति नागरिक समाज की परिभाषा करना आसान नहीं है, क्योंकि यह इतिहास में विकास करती हुई एक अवधारणा है। एस. के. दास - नागरिक समाज वो संगठित समाज है, जिस पर राज्य शासन करता है।

'सिविल सोसाइटी' अर्थात नागरिक समाज शब्द की उत्पत्ति

'सिविल सोसाइटी' अर्थात नागरिक समाज शब्द की उत्पत्ति प्राचीन ग्रीक (यूनान) राजनीतिक विचारों से हुई और जिनका उल्लेख सिसरो तथा अन्य रोमन विचारकों की कृतियों में मिला। परन्तु नागरिक समाज की राज्य के साथ समानता व्यक्त की गई आधुनिक रूप से नागरिक समाज (सिविल सोसाइटी) 18वीं शताब्दी के स्काटिश एण्ड कॉटिनेन्टल एनलाइटेनमेन्ट में उभरा।

सिविल सोसाइटी की विशेषतांए

- यह संगठित समाज को इंगित करता है। इसमें राज्य का एक बड़ा हिस्सा आता है।
- यह राज्य से अलग होता है, लेकिन राज्य के साथ इसका सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों तरह का सम्बन्ध पाया जाता है।
- यह नागरिक जीवन में राज्य के अनावश्यक हस्तक्षेप को कम करता है।
- समाज में राजनीतिक, सामाजिक, प्रशासनिक और आर्थिक चेतना जागृत करता है।
- सरकारी विभागों में कार्य संचालन को बेहद पारदर्शी बनाता है।
- यह स्वतंत्र एंव उत्तरदायी संगठन होता है।
- राज्य की मनमानी जनविरोधी नीतियों पर प्रतिबंध लगाता है।
- योजनाओं प्रशासन और नीति निर्माण के क्रियावयन में जन सहभागिता सुनिश्चित करता है।
- नागरिकों में देश के लिए कर्तव्य एवं निष्ठा का प्रसार एवं जागरण करता है ।
- इसके अन्तर्गत राज्य (राजनैतिक समाज) एवं परिवार (प्राकृतिक समाज) के बीच के समूह आते हैं।

- यह जनमत का निर्माण करता है और जनसामान्य प्रकृति वाली मांगे तय करता है। यह सरकार एवं बाजार दोनों पर लोकतांत्रिक जागरूकता के कारण नियंत्रण रखता है।
- इसका लक्ष्य सार्वजनिक भलाई से ओत-प्रोत होता है ।
- यह राज्य के अधिपत्य कम करने के लिए संस्थाओं के निर्माण का समर्थन करता है।
- यह बौद्धिक रूप से उन्नत एवं प्रगतिशील होता है।
- यह सामुदायिक मूल्य प्रणाली में नैतिक संदर्भ के रूप में कार्य करता है।
- यह स्वायत्त होते हुए भी राज्य की सत्ता के अधीन होता है।

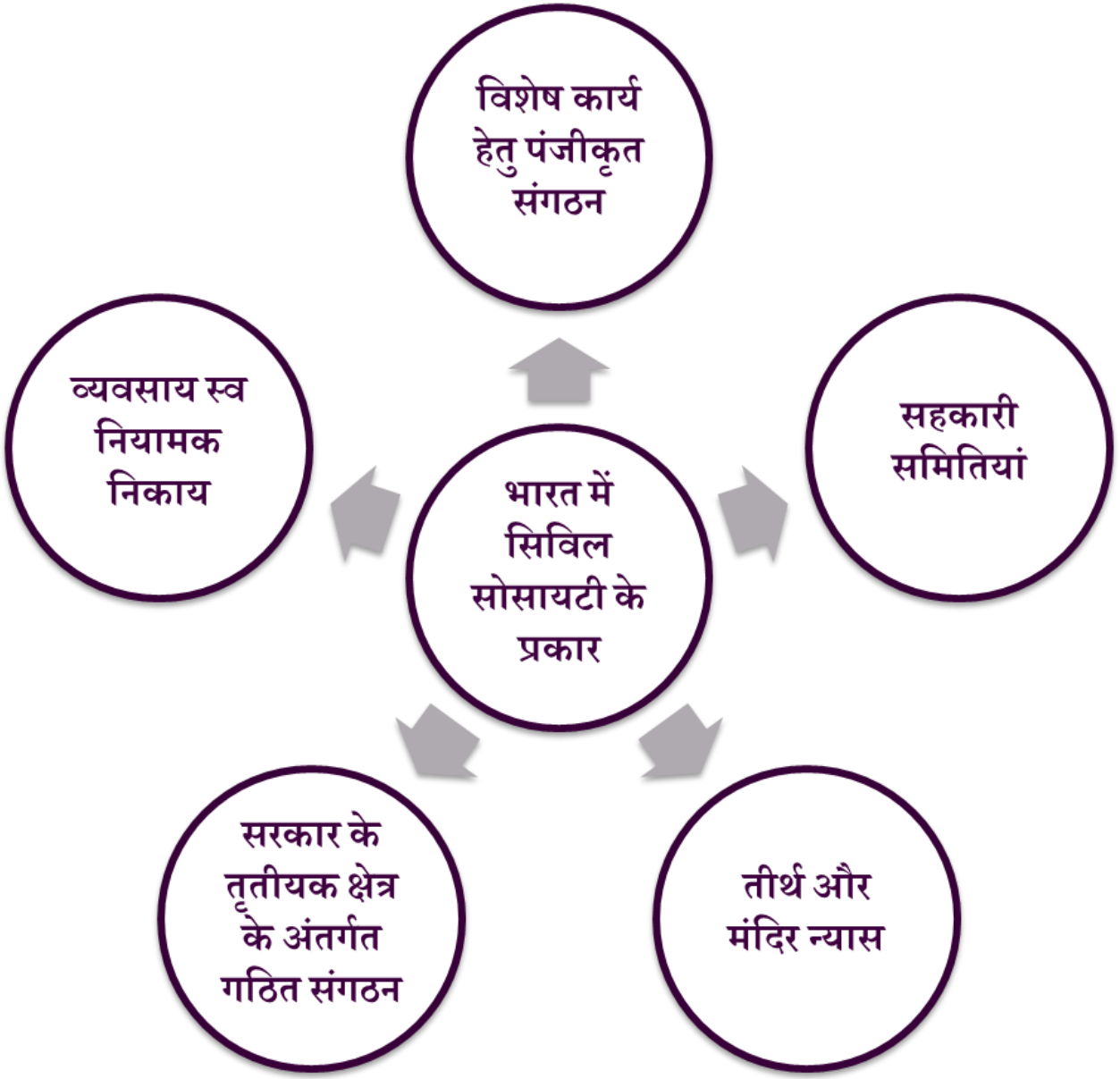
भारत में सिविल सोसायटी के प्रकार
विशेष कार्य हेतु पंजीकृत संगठन
सहकारी समितियां
तीर्थ और मंदिर न्यास
सरकार के तृतीयक क्षेत्र के अंतर्गत गठित संगठन
व्यवसाय स्व नियामक निकाय

नागरिक समाज की अवधारणा के अन्तर्गत निम्नलिखित संगठन, समूह एवं संस्थायें आती हैं -

1. गैर सरकारी संगठन
2. सामुदायिक संगठन
3. मजदूर संगठन
4. किसान संगठन
5. महिला संगठन
6. धार्मिक संगठन
7. सहकारी संस्थायें
8. व्यवसायिक एसोसियेशन
9. अन्य संगठित समूह

नागरिक समाज की देश के विकास एवं कल्याण में भूमिका

नागरिक समाज की देश के विकास एवं कल्याण में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इसकी उपस्थिति सत्ता को नियंत्रित करती है। इसकी भूमिका पहलू निम्न हैं

1. ये गरीबों को सामाजिक आर्थिक विकास के लिए संगठित करते हैं ।

2. समनता पर आधारित सार्वजनिक कल्याण को प्रेरित करते हैं।

3. प्रशासन में जन सहभागिता को बढ़ावा देते हैं।

4. जनता को सरकारी योजनाओं का और सरकार को जन समाज की समस्याओं से अवगत कराते हैं।

5. प्रशासनिक मशीनरी पर जबावदेही प्रणाली लागू करके, प्रशासन में निरंकुशता एवं भ्रष्टाचार पर रोक लगाते हैं।

6. प्रशासन को हित ग्राही मूलक बनाते हैं ।

- ये स्थानीय विकास के लिए स्थानीय संसाधन विकसित करने
- ये स्थानीय शासन को सशक्त बनाने में योगदान देते
- ये स्थानीय स्तर पर सार्वजनिक पहरेदार होते हैं ।
- ये जनता को राजनैतिक चेतना हेतु जागरूक
- ये जनता की मांगों को संगठित करते हैं।

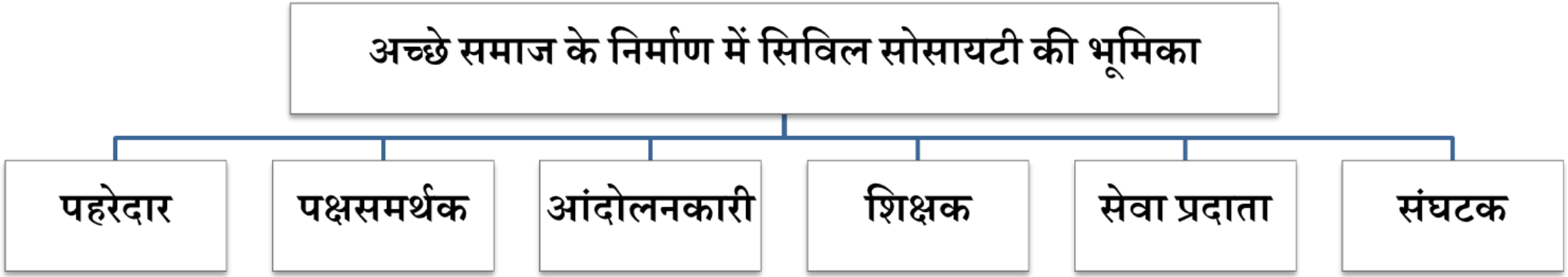
अच्छे समाज के निर्माण में सिविल सोसायटी की भूमिका
पहरेदार
पक्षसमर्थक
आंदोलनकारी
शिक्षक
सेवा प्रदाता
संघटक

जवाबदेहिता :

अपने कार्यों एवं अधिकारों के उपयोग का लेखा-जोखा अपने से उच्च स्तर के अधिकारियों को देने की विधिक जिम्मेदारी है।

उपाय

(i) भ्रष्टाचार के विरुद्ध आवाज उठाने वालों को संरक्षण देना।

(ii) नागरिकों की पहल को प्रोत्साहन देना जैसे- आर.टी.आई. का स्थानीय भाषा में प्रयोग होना।

(iii) प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देना।

(iv) सार्वजनिक सेवाओं के क्षेत्र में एकाधिकारवादी दृष्टिकोण को हतोत्साहित करना।

राजनीतिक दल

लोकतांत्रिक देश में संस्थाओं की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। राजनैतिक दल उन संस्थाओं का प्रतिनिधित्व करती है जिसमें लोग विधायी निकायों में राजनीतिक दलों के नामांकित व्यक्तियों को चुनकर भेजती है।

ये राजनैतिक दल लोगों को राजनीतिक गतिविधियों में भी शामिल करती हैं।

राजनीतिक दल लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिये आवश्यक है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में कई प्रकार के राजनैतिक दल उभरे।

1950 से 1960 तक काँग्रेस पार्टी का दबदबा था तथा उसके बाद के काल में कई अन्य दलों का वर्चस्व देखने को मिला।

राजनैतिक दल- वह संस्था है जिसमें नेताओं, अनुयायियों / कार्यकर्त्ता, नीतियों और कार्यक्रमों का संबंध होता है ।

राजनैतिक दलों में नेताओं, नीतियों कार्यक्रमों एवं विचार धारा के आधार पर अंतर किया जा सकता है।

राजनीतिक दल का प्रमुख सिद्धांत यह है कि वह अन्य संगठनों से अलग होता है क्योंकि इसका प्रमुख उद्देश्य सत्ता प्राप्त करना है।

गैर-दलीय संगठन केवल किसी विशेष अवसर पर ही चुनाव लड़ते हैं।

राजनैतिक दलों का व्यक्तियों, राज्यों एवं समाज के बीच महत्वपूर्ण संबंध होते हैं।

राजनीतिक दल, सामाजिक प्रक्रिया और नीति निर्माताओं के बीच घनिष्ठ संबंध स्थापित करते है। ये सामाजिक समूहों के हितों से जुड़े मुद्दों पर वाद-विवाद और नीतियों पर प्रभाव डालते हैं।

दलीय व्यवस्था का अर्थ देश में कई राजनैतिक दलों से संबंधित है। राजनीतिक व्यवस्था में उपस्थित पार्टियों की संख्या के आधार पर आमतौर पर एक दलीय प्रणाली, द्विदलीय प्रणाली एवं बहुदलीय प्रणाली के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है।

आजादी के बाद के पहले दशक में केवल काँग्रेस पार्टी का ही वर्चस्व या प्रभुत्व था। यह एक दलीय प्रभुत्व का युग था। लेकिन एक से अधिक दलों की अनुपस्थिति का नहीं।

1950 से 1960 के दशक की अवधि को रजनी कोठारी ने एक दल के वर्चस्व का युग बताया। इसका अर्थ यह हुआ कि भारत में काँग्रेस के अलावा कई अन्य दल भी मौजूद थे जैसे भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया भिन्न समाजवादी दल, स्वतंत्रता दल, रिपल्किन पार्टी ऑफ इंडिया जन संघ इत्यादि।

द्वि-दलीय व्यवस्था, - भारत में कुछ राज्यों में दो दलीय प्रणाली मौजूद है। इसका अर्थ यह नहीं कि उन राज्यों में दो दलों से अधिक दल नहीं है। इसका मतलब यह है कि इन सब दलों में केवल दो दल ही अधिक प्रभावशाली है। एक दल सरकार बनाता है तो दूसरा दल विपक्ष की भूमिका निभाता है।

दलों का वर्गीकरण चुनाव आयोग द्वारा उनके प्रदर्शन के आधार पर किया जाता है।

चुनाव आयोग ने भारत में तीन प्रकार के राजनीतिक दलों का वर्गीकरण किया है। राष्ट्रीय दल, राज्य या क्षेत्रीय दल तथा पंजीकृत दल

वर्तमान में, भारत में लगभग 2400 राजनीतिक दल हैं। जिनमें सात राष्ट्रीय दल हैं, 36 राज्य स्तरीय दल हैं, 329 क्षेत्रीय दल हैं तथा 2044 पंजीकृत या गैर पंजीकृत दल हैं।

राजनीतिक दलों का विकास

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद काँग्रेस एक मजबूत पार्टी के रूप में उभरी । स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान काँग्रेस एक महज आंदोलन था लेकिन बाद में आजादी के बाद में एक पार्टी बन गई।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में कई वर्षों तक राजनीतिक व्यस्था का विकास हुआ था। हालांकि, उस समय भी एक दलीय व्यवस्था नहीं थी।

1950 से 1960 बीच हालांकि काँग्रेस पार्टी का ही वर्चस्व रहा था, अन्य दलों की स्थिति ठीक नहीं थी। उनका समर्थन भी काफी कम था।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में तीन प्रकार की दलीय प्रणाली देखने को मिली हैं। एक दलीय प्रणाली का वर्चस्व, द्विदलीय प्रणाली तथा बहु-प्रणाली ।

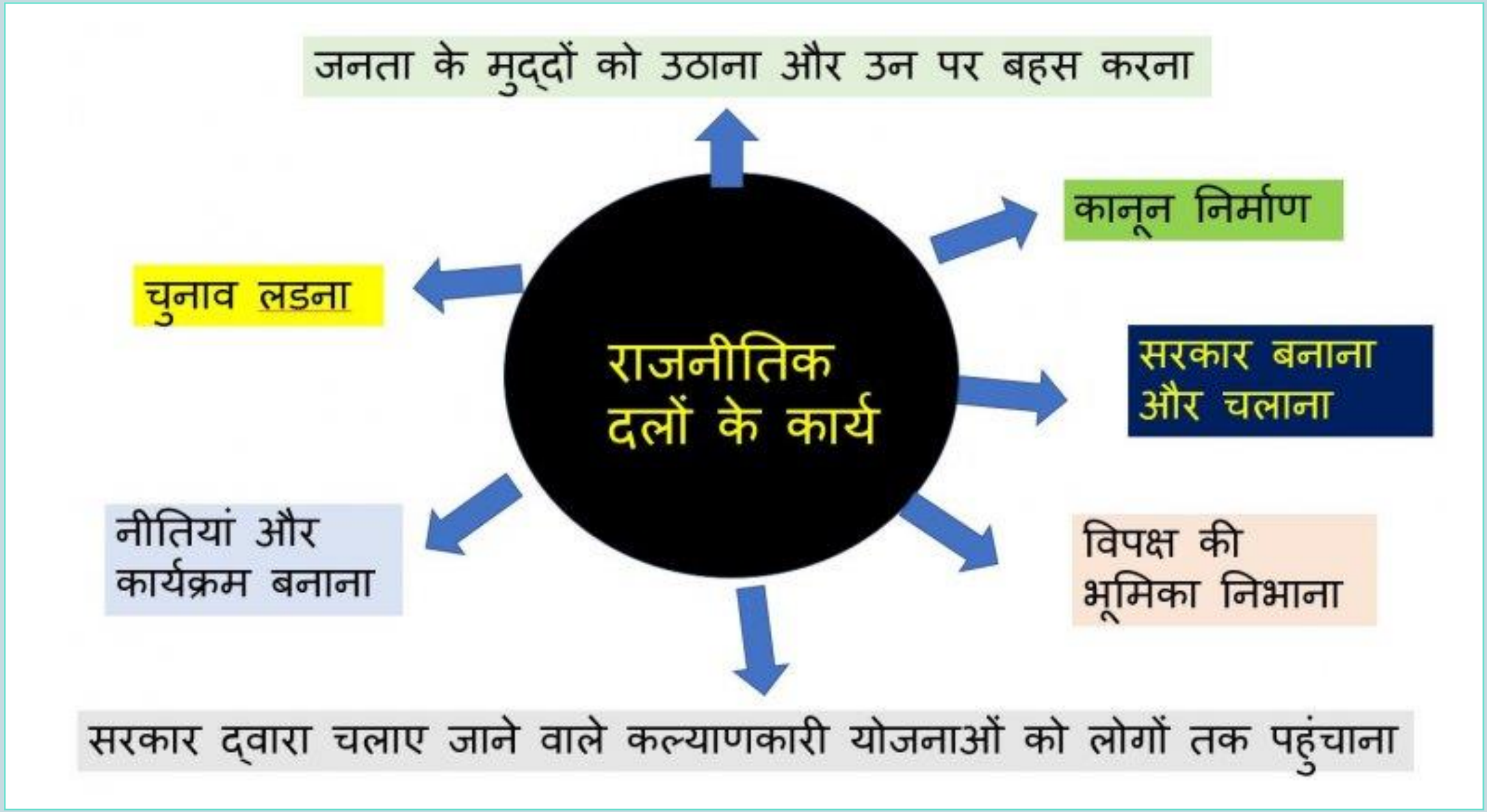
जनता के मुद्दों को उठाना और उन पर बहस करना
कानून निर्माण
चुनाव लड़ना
राजनीतिक दलों के कार्य
सरकार बनाना और चलाना
नीतियां और कार्यक्रम बनाना
विपक्ष की भूमिका निभाना
सरकार द्वारा चलाए जाने वाले कल्याणकारी योजनाओं को लोगों तक पहुंचाना

लोकतन्त्र में राजनीतिक दलों के कार्य

1. सुदृढ़ संगठन स्थापित करना – "संगठन में ही शक्ति निहित होती है और कोई भी राजनीतिक दल सुदृढ़ संगठन के बिना अपने लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सकता। अधिकाधिक सुदृढ़ करना होता है। इस दृष्टि से राजनीतिक दल केन्द्रीय, प्रान्तीय और स्थानीय स्तर पर संगठन स्थापित करते हैं।

2. दलीय नीति निर्धारित करना –बाहरी क्षेत्र में सम्बन्धों और आन्तरिक क्षेत्र में अर्थव्यवस्था, खाद्य, यातायात, शिक्षा, रोजगार और अन्य प्रमुख बातों के सम्बन्ध में अपनी नीति निर्धारित करता है।

3. दलीय नीति का प्रचार और प्रसार कर अपनी शक्ति बढ़ाना –दल के सदस्यों की संख्या में अधिक-से-अधिक वृद्धि हो। इसके अलावा प्रत्येक राजनीतिक दल अपने लिए ऐसे व्यक्तियों की सहानुभूति और समर्थन प्राप्त करने का प्रयत्न करता है राजनीतिक दलों के द्वारा इसके लिए प्रेस, प्लेटफॉर्म, साहित्य के प्रकाशन और अन्य साधनों को अपनाया जाता है

4. लोकमत का निर्माण –समस्याओं को राजनीतिक दल जनता के सामने ऐसे रूप में प्रस्तुत करते हैं कि साधारण जनता उन्हें समझ सके। जब विविध राजनीतिक दल समस्याओं के सम्बन्ध में अपने दृष्टिकोण का प्रतिपादन करते हैं, तो साधारण जनता इन समस्याओं को भली प्रकार समझकर निर्णय कर सकती है और स्वस्थ लोकमत का निर्माण सम्भव होता है।

5. उम्मीदवारों का चयन व उन्हें विजयी बनाना – प्रत्येक राजनीतिक दल सार्वजनिक पदों के लिए अपने उम्मीदवारों का चयन करता है और अपने उम्मीदवारों की विजय के लिए प्रत्येक सम्भव प्रयास करता है। राजनीतिक दलों के माध्यम से ही लोकतन्त्र में निर्धन, किन्तु योग्य व्यक्तियों को देश की सेवा करने का अवसर प्राप्त होता है।

6. धन एकत्रित करना –प्रत्येक राजनीतिक दल धनराशि एकत्रित करता है। राजनीतिक दल अधिकाधिक धनराशि एकत्रित करने के लिए अनुचित उपायों को अपना लेते हैं और उनके द्वारा धनी-मानी व्यक्तियों से साँठ-गाँठ कर ली जाती है। इसे लोकतन्त्र के हित में नहीं कहा जा सकता। अत: राजनीतिक दलों के द्वारा उचित और खुले उपायों से ही धन प्राप्त किया जाना चाहिए।

7. सरकार का निर्माण – निर्वाचन के बाद राजनीतिक दलों के द्वारा ही सरकार का निर्माण किया जाता है। अध्यक्षात्मक शासन-व्यवस्था में राष्ट्रपति अपने विचारों से सहमत व्यक्तियों की मन्त्रिपरिषद् का निर्माण कर शासन को संचालन करता है। **8. शासन 8; सत्ता को सीमित रखना** –यदि बहुमत दल शासन सत्ता के संचालन का कार्य करता है तो अल्पमत दल विरोधी दल के रूप में कार्य करते हुए शासन शक्ति को सीमित रखने की कोशिश करते हैं। संगठित विरोधी दल के अभाव में शासन दल तानाशाही रुख अपना सकता है।

9. सरकार के विभिन्न विभागों में समन्वय और सामंजस्य रखना –संसदीय शासन हो या अध्यक्षात्मक शासन, राजनीतिक दल ही इस कार्य को सम्पन्न करते हैं। राजनीतिक दलों की सहायता के बिना शासन को भली प्रकार संचालन सम्भव नहीं हो सकता। अमेरिका में दलीय व्यवस्था ने ही व्यवस्थापिका और कार्यपालिका के बीच सहयोग स्थापित कर संविधान की कमी को दूर कर दिया है।

10. जनता और शासन के बीच सम्बन्ध –प्रजातन्त्र में जिस दल के हाथ में शासन शक्ति होती है, उसके सदस्य जनता के मध्य सरकारी नीति का प्रचार कर जनमत को पक्ष में रखने का प्रयत्न करते हैं। विरोधी दल शासन के दोषों की ओर जनता का ध्यान आकर्षित करते हैं।

11.सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास के कार्य – राजनीतिक दल अनेक बार सामाजिक सुधार एवं सांस्कृतिक विकास के भी अनेक कार्य करते हैं; जैसे–स्वतन्त्रता के पूर्व गांधी जी के नेतृत्व में कांग्रेस ने भारत में हरिजनों की स्थिति को ऊँचा उठाने और मद्यपान का अन्त करने का प्रयत्न किया। विभिन्न राजनीतिक दल पुस्तकालय, वाचनालय एवं अध्ययन केन्द्र स्थापित करके बौद्धिक एवं सांस्कृतिक विकास में भी योग देते हैं। विकसित देशों में राजनीतिक दल सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास के कार्यों पर बहुत अधिक ध्यान देते हैं।

राजनीतिक दलों के गुण

1. सार्वजनिक शिक्षा का साधन –राजनीतिक दलों का उद्देश्य अपनी लोकप्रियता बढ़ाकर शासन शक्ति पर अधिकार करना होता है और इसलिए वे प्रेस, मंच, रेडियो आदि साधनों के माध्यम से अपनी विचारधारा का अधिक-से-अधिक प्रचार करते हैं। इस प्रकार के प्रचार और वाद-विवाद के परिणामस्वरूप जनता को सार्वजनिक समस्याओं को ज्ञान प्राप्त होता है और उनमें सार्वजनिक क्षेत्र के प्रति रुचि जाग्रत होती है।

2. लोकतन्त्र के लिए आवश्यक –जनता अपने प्रतिनिधियों को चुनती है और इन प्रतिनिधियों द्वारा शासन कार्य किया जाता है। इस प्रकार प्रजातन्त्रात्मक शासन-व्यवस्था के संचालन के लिए राजनीतिक दलों का अस्तित्व अनिवार्य है। लीकॉक ने कहा है, "दलबन्दी ही एकमात्र ऐसी चीज है जो लोकतन्त्र को सम्भव बनाती है।"

3. शासन के विभिन्न विभागों में समन्वय स्थापित करना – अध्यक्षात्मक शासन में राजनीतिक दल कार्यपालिका और विधानमण्डल के बीच मेल बनाये रखते हैं। इन दलों के अभाव में अध्यक्षात्मक शासन ठीक प्रकार से कार्य नहीं कर सकता। इस व्यवस्था वाले देशों में राजनीतिक दल व्यवस्थापिका और कार्यपालिका दोनों पर प्रभाव रखते हैं और इनके बीच उत्पन्न होने वाले विरोध को दूर करते हैं।

4. श्रेष्ठ कानूनों का निर्माण – श्रेष्ठ कानूनों का निर्माण तभी सम्भव है जब कानूनों के गुण व दोषों पर उचित रीति से विचार हो। व्यवस्थापिका में मौजूद विरोधी दल के सदस्य शासन दल द्वारा प्रस्तुत सभी विधेयकों के अवलोकन और सुधार करने के लिए तैयार रहते हैं। इस प्रकार के वाद-विवाद से विधेयकों के सभी दोष सामने आ जाते हैं और श्रेष्ठ कानूनों का निर्माण सम्भव होता है।

5. स्थायी और सबल सरकार की स्थापना संगठन में ही शक्ति निहित होती है।" और राजनीतिक दल शासन को वह शक्ति प्रदान करते हैं जिससे शासन-व्यवस्था सुगमता और दृढ़तापूर्वक चल सके। यदि जनता का प्रत्येक प्रतिनिधि व्यक्तिगत रूप में कार्य करे तो न तो सरकार स्थायी हो सकती है और न ही सरकार में उत्तरदायित्व निश्चित किया जा सकता है। दल के सदस्यों में शासन सम्बन्धी नीति के विषय में एकता होती है। अतः सरकार में दृढ़ता और स्थायित्व रहता है।

6. शासन की निरंकुशता पर नियन्त्रण – प्रजातन्त्रीय शासन-व्यवस्था में बहु-संख्यक दल द्वारा शासन कार्य और अल्पमत दल द्वारा विरोधी दल के रूप में कार्य किया जाता है। विरोधी दल शासक दल की मनमानी पर रोक लागते हुए उसे निरंकुश बनने से रोकता है। लॉस्की ने ठीक ही कहा है, "राजनीतिक दल तानाशाही से हमारी रक्षा का सबसे अच्छा साधन है।"

7. विभिन्न मतों का संगठन – विवेकशीलता के कारण मनुष्यों में मतभेदों का होना स्वाभाविक है और इसके साथ ही आधारभूत समस्याओं के सम्बन्ध में अनेक व्यक्तियों के एक ही प्रकार के विचार भी होते हैं। राजनीतिक दलों द्वारा इस प्रकार की आधारभूत एकता रखने वाले व्यक्तियों को संगठित रखने का उपयोगी कार्य किया जाता है, ताकि वे अनुशासित रूप में उपयोगी कार्य कर सकें।

8. निर्धन व्यक्तियों का चुनाव में खड़ा होना सम्भव – राजनीतिक दलों का एक लाभ यह भी है कि जो योग्य किन्तु निर्धन व्यक्ति हैं, वे चुनाव लड़ने के लिए सक्षम हो जाते हैं क्योंकि उन्हें अपने दल से चुनाव लड़ने के लिए पर्याप्त धनराशि व कार्यकर्ताओं आदि के रूप में साधन प्राप्त हो जाते हैं। इस कारण सार्वजनिक जीवन में रुचि रखने वाले योग्य व्यक्ति धनाभाव के कारण देश की सेवा से वंचित नहीं रहते।

9. राष्ट्रीय एकता का साधन – राजनीतिक दलों का उद्देश्य राष्ट्रीय हित में कार्य करना होता है। दल प्रणाली व्यक्ति को जाति, धर्म, भाषा और समुदाय के संकीर्ण भेदों से ऊपर उठाकर देश और राष्ट्र के कल्याण के सम्बन्ध में विचार करने के लिए प्रेरित करती है। दलों द्वारा उत्पन्न किये गये इस व्यापक दृष्टिकोण से राष्ट्रीय एकता के बन्धन दृढ़तर हो जाते हैं।

10. सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास – राजनीतिक दल अनेक बार सामाजिक सुधार और सांस्कृतिक विकास के कार्य करते हैं; जैसे–स्वतन्त्रता के पूर्व गांधी जी के नेतृत्व में भारत में राष्ट्रीय कांग्रेस ने हरिजनों की स्थिति को ऊँचा उठाने और मद्यपान का अन्त करने का प्रयत्न किया। विभिन्न राजनीतिक दल पुस्तकालय, वाचनालय एवं अध्ययन केन्द्र स्थापित करके बौद्धिक एवं सांस्कृतिक विकास में भी योग देते हैं।

दल पद्धति के दोष

1. लोकतन्त्र के विकास में बाधक –राजनीतिक दल के सदस्य को सार्वजनिक क्षेत्र में अपने व्यक्तिगत विचार को त्यागकर दल की बात का समर्थन करना होता है। लीकॉक (Leacock) ने कहा है, "राजनीतिक दल उस व्यक्तिगत विचार एवं कार्य सम्बन्धी स्वतन्त्रता का अन्त कर देते हैं, जिसे लोकतन्त्रात्मक सरकार का आधारभूत सिद्धान्त समझा जाता है।"

2. राष्ट्रीय हितों की हानि – राजनीतिक दल को राष्ट्रीय हित की वृद्धि के लिए संगठित समुदाय कहा गया है, किन्तु व्यवहार में व्यक्ति अनेक बार अपने राजनीतिक दल के इतने अधिक भक्त हो जाते हैं कि वे जाने-अनजाने में दल के हितों को राज्य के हितों से प्राथमिकता दे देते हैं।

3. शासन कार्य में सर्वश्रेष्ठ व्यक्तियों की उपेक्षा – शासन कार्य सर्वोच्च कला है और इस नाते देश के सबसे योग्य व्यक्तियों द्वारा इस प्रकार का कार्य किया जाना चाहिए, किन्तु दलीय व्यवस्था के कारण शासन सर्वश्रेष्ठ व्यक्तियों की सेवा से वंचित रह जाता है। सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति न तो जी-हजूरी कर सकते हैं और न ही विचार एवं कार्य की स्वतन्त्रता को छोड़ सकते हैं। इसी कारण राजनीतिक दलों की ओर से उन्हें अपना प्रतिनिधि नहीं बनाया जाता है।

4. भ्रमात्मक राजनीतिक शिक्षा प्रदान करना – राजनीतिक दलों को सार्वजनिक शिक्षा का साधन' कहा जाता है, किन्तु व्यवहार में राजनीतिक दल राजनीतिक शिक्षा प्रदान करने के नाम पर असत्य व्याख्यानों और बकवास के द्वारा भोली-भाली जनता को धोखे में डालने की चेष्टा करते हैं। गिलक्रिस्ट के शब्दों में, "राजनीतिक दल वास्तविकता का दमन करने और अवास्तविकता प्रकट करने के अपराधों के दोषी होते हैं।"

5. नैतिक स्तर में गिरावट – व्यवहार में राजनीतिक दलों का उद्देश्य येन-केन प्रकारेण' शासन शक्ति पर अधिकार करना होता है और इस उद्देश्य की सिद्धि के लिए उनके द्वारा नैतिक-अनैतिक सभी प्रकार के उपायों का सहारा लिया जाता है। चुनावों के समय राजनीतिक दलों के द्वारा किये गये नकारात्मक प्रचार, व्यक्तिगत आलोचना और झूठे एवं मिथ्या वायदों से जनता के नैतिक स्तर पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। दलों के इन कार्यों के कारण ही व्यवहार में 'राजनीति' शब्द बुराई का पर्यायवाची बन गया है।

6. जनता मतभेदों को प्रोत्साहन –

राजनीतिक दल मतभेदों को दूर करने के स्थान पर प्रोत्साहित करते हैं और सार्वजनिक जीवन को कटुतापूर्ण बना देते हैं। व्यवस्थापिका तो विरोधी वर्गों में विभाजित हो ही जाती है, दूसरी ओर देश भी ऐसे विरोधी पक्षों में विभाजित हो जाता है जो एक-दूसरे से ईर्ष्या करते, परस्पर आरोप लगाते और लड़ते हैं।

7. राजनीति में भ्रष्टाचार –जब एक राजनीतिक दल का उम्मीदवार विजयी हो जाता है तो उस दल के स्थानीय नेता राजकीय पद, ठेके या इनाम के रूप में अनुचित लाभ पाने की चेष्टा करते हैं। इन दलों के कारण सम्पूर्ण राजनीति एक प्रकार का व्यवसाय बनकर रह जाती है। इस सम्बन्ध में गैटिल ने लिखा है कि, "राजनीति में एक बहुत बड़ा खतरा दलों तथा व्यावसायिक हितों का गठबन्धन होता है, जिसके परिणामस्वरूप भ्रष्टाचार फैलता है।"

8. समय और धन का अपव्यय – दलीय व्यवस्था के कारण व्यवस्थापिका सभाओं में विरोधी दल 'विरोध के लिए विरोध' की प्रवृत्ति अपनाता है और इस प्रवृत्ति के कारण बहुत-सा अमूल्य समय और लाखों रुपये बरबाद हो जाते हैं। इस धनराशि को यदि राष्ट्र निर्माणकारी कार्यों में व्यय किया जाये, तो देश बहुत उन्नति कर सकता है।

राजनीतिक दल के प्रकार

वैसे राजनीति विज्ञानी आधुनिक लोकतांत्रिक राज्य में चार प्रकार के राजनैतिक दल को मानते हैं–

(1) प्रतिक्रियावादी राजनीतिक दल (Reactionary political parties) – ये पुरानी सामाजिक-आर्थिक तथा राजनीतिक व्यवस्थाओं से चिपके रहना चाहते हैं। ये "मैं सही हूँ "के स्थान पर "मै ही सही हूँ" को मानते हैं और कुछ भी अपने अनुसार न होता देख उसकी जबर्दस्त आलोचना करते हैं।

(2) रूढ़िवादी दल (Conservative Party) –ये भी अपनी परंपरा, रीति-रिवाज या कुछ प्रकार के अंधविश्वासों से जकड़े रहते हैं, ये हर चीज़ को आस्था, विश्वास या पूर्व के अनुभवों के आधार पर तौलने की कोशिश करते हैं। हालांकि ये बदलाव तो चाहते है लेकिन उतनी ही जितने से इसके विचारधारा को ठेस न पहुंचे।

(3) उदारवादी दल (Moderate party) – इनका लक्ष्य विद्यमान संस्थाओं में सुधार करना होता है तथा ये लोग fair competition को सपोर्ट करते हैं।

(4)सुधारवादी दल (Reformist party) – इनका उद्देश्य विद्यमान व्यवस्था को हटाकर नई व्यवस्था स्थापित करना होता है। और इसके लिए कुछ स्थितियों में हिंसा का भी सहारा लेनी पड़े तो लेना जायज है।

दलीय व्यवस्था (Party system)

जहां पर अभी भी मोनार्की व्यवस्था (राजतंत्र) है अगर उसे छोड़ दे तो विश्व में तीन तरह की दलीय व्यवस्था है।

(1) एक दलीय व्यवस्था (One party system) – इसमें केवल एक ही दल होता है जो कि सत्तारूढ़ दल होता है और विरोधी दल की कोई व्यवस्था नहीं होती है, जैसे-चीन

(2) दो दल व्यवस्था (Two Party System) – इसमें दो बड़े दल विद्यमान होते हैं। (कई छोटे-छोटे दल भी होते हैं लेकिन वे इतने महत्वपूर्ण नहीं होते) जैसे अमेरिका तथा ब्रिटेन

(3) बहुदलीय व्यवस्था (Multi party system) – इसमें कई दल होते है जो आमतौर पर मिलजुल कर सरकार बनाते हैं। जैसे- फ्रांस, इटली, भारत आदि।

निर्वाचन आयोग के अनुसार किसी दल को राष्ट्रीय पार्टी होने के लिए कम से कम निम्नलिखित योग्यताऐं होनी चाहिए:

i) उसे कम से कम तीन राज्यों से लोकसभा में कम से कम दो प्रतिशत सीटें प्राप्त करनी होती है;

ii) आम चुनाव में पार्टी को छह प्रतिशत वोट मिलें हों कम से कम चार लोकसभा सीटें जीते;

iii) चार या उससे अधिक राज्यों में दल को राज्य स्तरीय पार्टी के रूप में मान्यता दी जानी चाहिए।

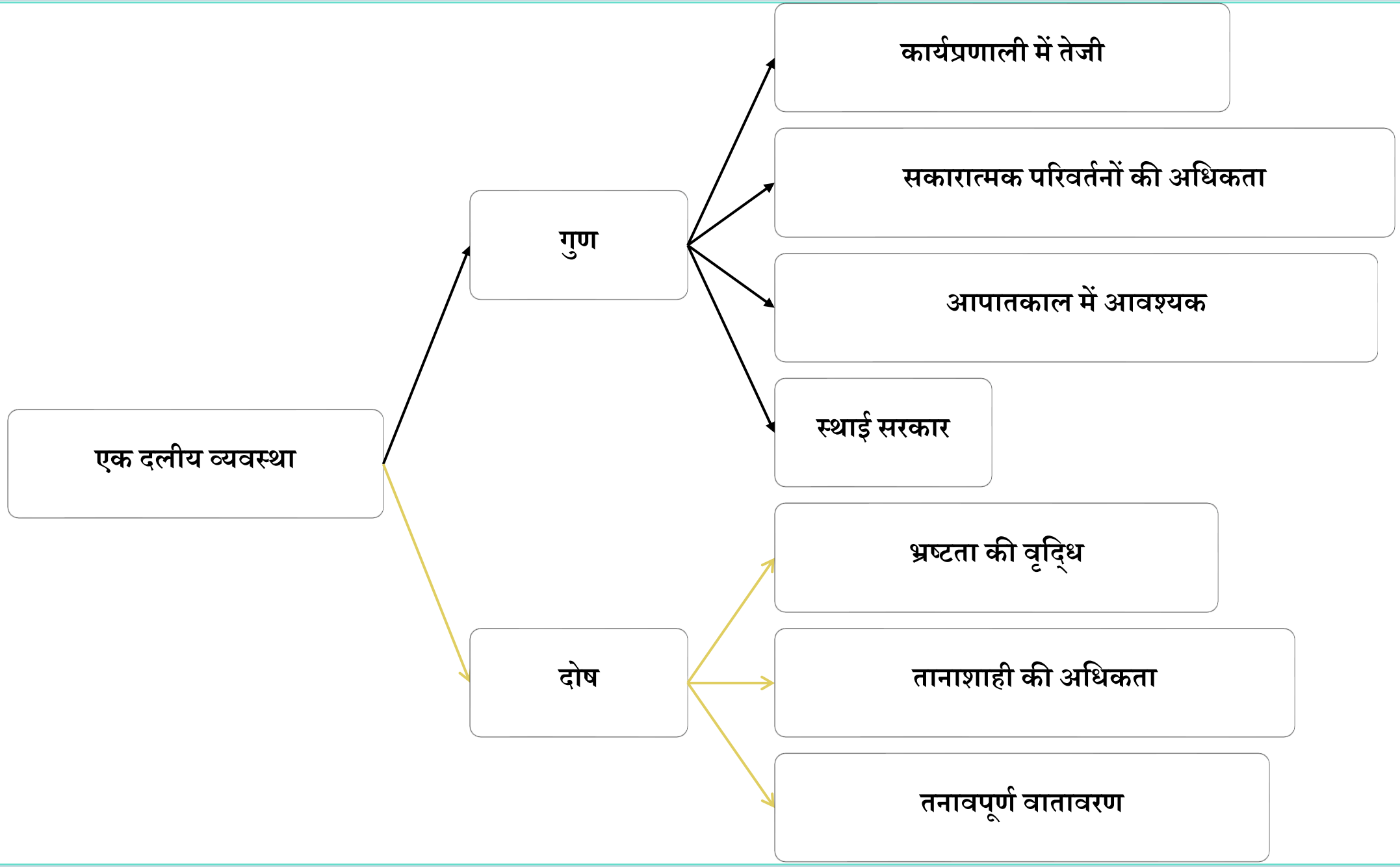
एक दलीय व्यवस्था
गुण
कार्यप्रणाली में तेजी
सकारात्मक परिवर्तनों की अधिकता
आपातकाल में आवश्यक
स्थाई सरकार
दोष
भ्रष्टता की वृद्धि
तानाशाही की अधिकता
तनावपूर्ण वातावरण

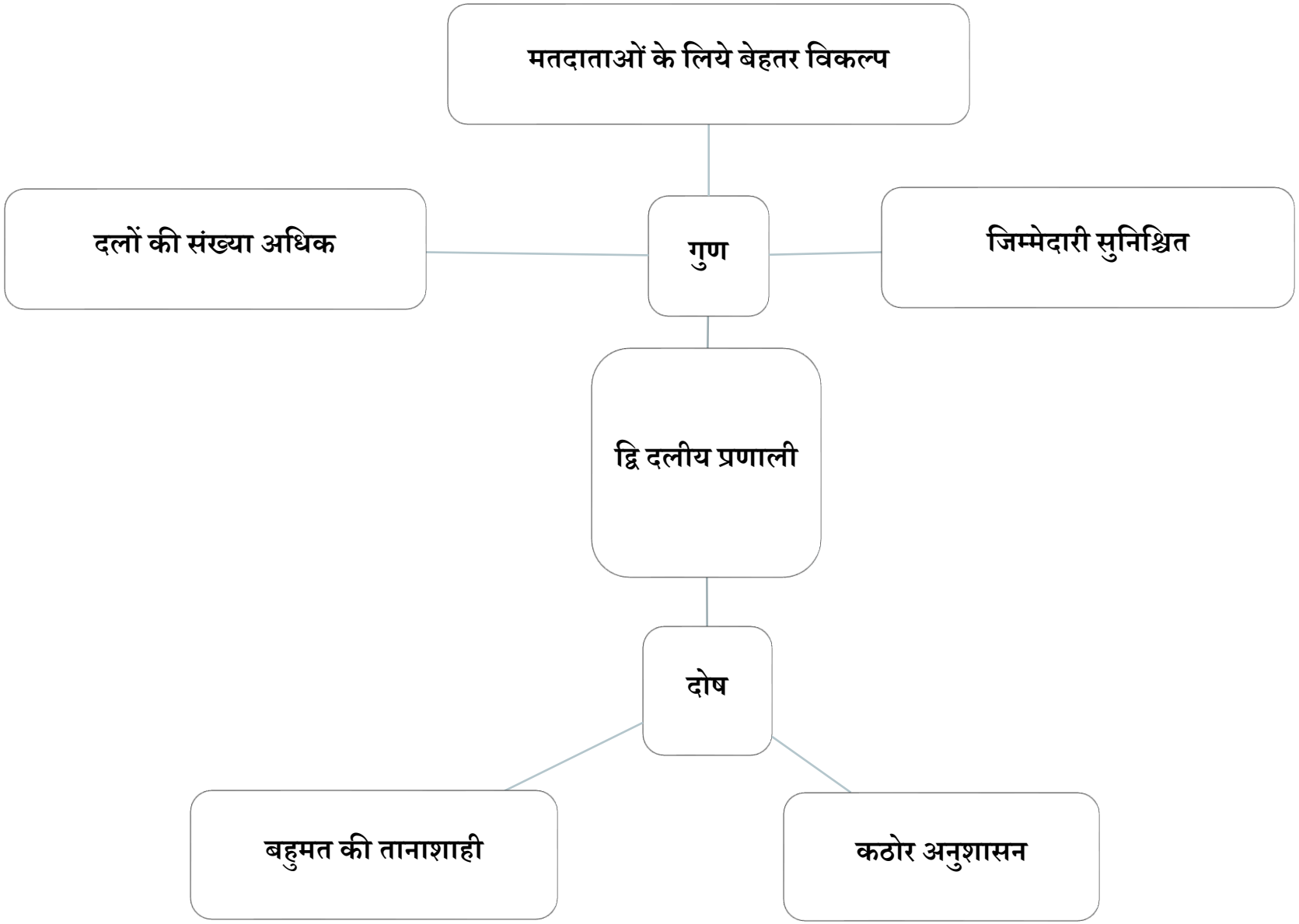
मतदाताओं के लिये बेहतर विकल्प
दलों की संख्या अधिक
गुण
जिम्मेदारी सुनिश्चित
द्वि दलीय प्रणाली
दोष
बहुमत की तानाशाही
कठोर अनुशासन

द्विदलीय प्रणाली के अन्य लाभ/गुण

1. **वास्तविक प्रतिनिधि सरकार की स्थापना** –बहुदलीय व्यवस्था के अन्तर्गत सरकार का निर्माण जनता द्वारा नहीं वरन् राजनीतिक दलों के पारस्परिक समझौतों द्वारा होता है। है जिसे मतदाताओं का बहुमत प्राप्त हो।

2. **सरकार का निर्माण** –बहुमत दल को सरकार के निर्माण का कार्य सौंपा जाता है और जब यह दल अविश्वसनीय हो जाता है या आगामी चुनावों में हार जाता है तो शासन की शक्ति उस दल के हाथ में आ जाती है जो पहले विरोधी दल के रूप में कार्य कर रहा था।

3. **शासन में स्थायित्व और निरन्तरत** –मन्त्रिमण्डल को व्यवस्थापिका में एक शक्तिशाली दल का समर्थन प्राप्त होता है और इस समर्थन के आधार पर मन्त्रिमण्डल दृढ़तापूर्वक शासन कार्य का संचालन कर सकता है। ऐसी व्यवस्था के अन्तर्गत सामान्यतया सरकारें स्थायी होती हैं और इनके द्वारा अपने कार्यक्रम और नीति को विश्वासपूर्वक कार्यरूप में परिणित किया जा सकता है।

4. संवैधानिक गतिरोध की आशंका नहीं – द्विदलीय प्रणाली में कभी भी संवैधानिक गतिरोध पैदा नहीं होता, क्योंकि प्रत्येक समय विरोधी दल वर्तमान शासन का अन्त कर शासन-व्यवस्था पर अधिकार प्राप्त करने के लिए तत्पर रहता है।

5. शासन में एकता और उत्तरदायित्व की व्यवस्था – शासन कार्य सफलतापूर्वक करने के लिए 'सत्ता का एकत्रीकरण' आवश्यक होता है और शासन-व्यवस्था में इस प्रकार की एकता द्विदलीय प्रणाली के अन्तर्गत ही सम्भव है।

6. संगठित विरोधी दल –शासन को नियन्त्रित रखने का कार्य उसी समय भलीभाँति किया जा सकता है जब विरोधी राजनीतिक दल सुसंगठित और पर्याप्त शक्तिशाली हो। द्विदलीय व्यवस्था के अन्तर्गत विरोधी दल सदैव ही इस स्थिति में होता है। वस्तुत: प्रतिनिधि शासन के संचालन के लिए द्विदलीय प्रणाली ही सर्वाधिक उपयुक्त है।

द्विदलीय प्रणाली के दोष

1. मतदान की स्वतन्त्रता सीमित – द्विदलीय प्रणाली के अन्तर्गत नागरिकों को दो में से एक दल को अपना मत देना ही होता है, चाहे वे दोनों दलों के उम्मीदवारों या दलों की नीतियों से असहमत ही क्यों न हों। मैकाइवर के शब्दों में, "इस पद्धति में मतदाता की पसन्दगी अत्यधिक सीमित हो जाती है। और यह स्वतन्त्र जनमत के निर्माण में भी बाधक होती है।

2. राष्ट्र का विभाजन –समस्त राष्ट्र ऐसे दो दलों में विभक्त हो जाता है जिसमें समझौते की कोई सम्भावना नहीं रहती, लेकिन बहुदलीय प्रणाली राष्ट्र को आपस में न मिल सकने वाले समूहों में विभाजित नहीं होने देती। लोग अपने सिद्धान्तों के आधार पर ही; बिना किसी प्रकार के गम्भीर समझौते किये परस्पर मिल सकते और सहयोग कर सकते हैं।

3. बहुमत की निरंकुशता – द्विदलीय प्रणाली के अन्तर्गत एक ही राजनीतिक दल के हाथ में व्यवस्थापिका और कार्यपालिका सम्बन्धी शक्ति होती है और, इसके परिणामस्वरूप एक ऐसे निरंकुश बहुमत का जन्म होता है जो सदा ही अल्पमत को परेशान और उसकी माँग की अवहेलना करता रहता है।

4. व्यवस्थापिका के महत्त्व और सम्मान में कमी –क्योंकि व्यवस्थापिका का बहुमत दल सदैव ही मन्त्रिमण्डल का समर्थन करता रहता है। व्यवस्थापिका 'मात्र लेखा करने वाली संस्था (Recording Institution) और दल के सदस्य कार्यपालिका की इच्छानुसार मत देने वाले यन्त्र मात्र बनकर रह जाते हैं।

5. मन्त्रिमण्डलीय तानाशाही –प्रधानमन्त्री दल का नेता भी होता है और व्यवस्थापिका के साधारण सदस्य दल के नेता की बात का विरोध नहीं कर पाते। दल के सदस्य अपने दल की मन्त्रिपरिषद् को इस कारण भी विरोध नहीं कर पाते हैं कि कहीं विरोधी दल की सरकार न बन जाये। इंग्लैण्ड में मन्त्रिमण्डल के प्रभाव और सम्मान में वृद्धि और लोक सदन (House of Commons) के सम्मान में कमी होने का एक प्रमुख, कारण यह द्विदलीय प्रणाली ही है।

6. अनेक हित बिना प्रतिनिधित्व के देश की राजनीति में जब केवल दो ही राजनीतिक दल होते हैं तो अनेक हितों और वर्गों को व्यवस्थापिका में प्रतिनिधित्व ही प्राप्त नहीं हो पाता। यह स्थिति प्रजातन्त्र के लिए उचित नहीं कही जा सकती।

एडमण्ड बर्क, गैटिल और अन्य विद्वानों द्वारा राजनीतिक दलों के निम्नलिखित आवश्यक तत्त्व हैं-

1. संगठन – आधारभूत समस्याओं के सम्बन्ध में एक ही प्रकार का विचार रखने वाले व्यक्ति जब तक भली प्रकार से संगठित नहीं होते, उस समय तक उन्हें राजनीतिक दल नहीं कहा जा सकता। राजनीतिक दलों की शक्ति संगठन पर ही निर्भर होती है, अत: राजनीतिक दलों को यह प्रथम आवश्यक तत्त्व है कि वे भली प्रकार संगठित होने चाहिए।

2. सामान्य सिद्धान्तों की एकता – राजनीतिक दल उसी समय संगठित रूप में कार्य कर सकते हैं जब राजनीतिक दल के सभी सदस्य सामान्य सिद्धान्तों के विषय में एक ही प्रकार की धारणा रखते हों। विस्तार की बातों के सम्बन्ध में उनमें किसी प्रकार के मतभेद हो सकते हैं, किन्तु आधारभूत बातों के सम्बन्ध में विचारों की एकता होना आवश्यक है।

3. संवैधानिक साधनों में विश्वास – राजनीतिक दल शासन शक्ति प्राप्त करने के लिए संगठित होते हैं, किन्तु शासन शक्ति प्राप्त करने के लिए उनके द्वारा संवैधानिक उपायों का ही आश्रय लिया जाना चाहिए। मतदान और मतदान के निर्णय में उनका विश्वास होना चाहिए। गुप्त उपाय या सशस्त्र क्रान्ति में विश्वास करने वाले संगठन राजनीतिक दल नहीं कहे जा सकते।

राजनीतिक दल के आवश्यक तत्त्व

4. शासन पर प्रभुत्व की इंच्छा – राजनीतिक दल का एक तत्त्व यह होता है कि उसका उद्देश्य शासन पर प्रभुत्व स्थापित कर अपने विचारों और नीतियों को कार्यरूप में करना होता है। यदि कोई संगठन शासन के बाहर रहकर कार्य करना चाहता है तो उसे राजनीतिक दल नहीं कहा जा सकता।

5. राष्ट्रीय हित – राजनीतिक दल के लिए यह आवश्यक है कि उसके द्वारा किसी विशेष जाति, धर्म या वर्ग के हित को दृष्टि में रखकर नहीं, वरन् सम्पूर्ण राज्य के हित को दृष्टि में रखकर कार्य किया जाना चाहिए। बर्क ने राजनीतिक दल की परिभाषा करते हुए उन्हें 'राष्ट्रीय हित की वृद्धि के लिए संगठित राजनीतिक समुदाय' ही कहा है।

बहुदलीय प्रणाली की प्रमुख विशेषताएँ निम्नवत् हैं-

मतदाताओं को अधिक स्वतन्त्रता – जहाँ दलों की संख्या अधिक होती है, वहाँ मतदाताओं को स्वाभाविक रूप से चयन की अधिक स्वतन्त्रता प्राप्त रहती है, क्योंकि वे कई दलों में से अपने ही समान विचार रखने वाले किसी दल का समर्थन कर सकते हैं।

मन्त्रिमण्डल की तानाशाही सम्भव नहीं – बहुदलीय पद्धति में सामान्यतया व्यवस्थापिका में किसी एक राजनीतिक दल को स्पष्ट बहुमत प्राप्त नहीं हो पाता, अत: मिले-जुले मन्त्रिमण्डल का निर्माण किया जाता है।

सभी विचारधाराओं का व्यवस्थापिका में प्रतिनिधित्व – जहाँ बहुदलीय पद्धति होती है, वहाँ व्यवस्थापिका में सभी विचारधाराओं के लोगों को प्रतिनिधित्व मिल जाता है और राष्ट्र के सभी वर्गों के विचार सुने जा सकते हैं।

राष्ट्र दो विरोधी गुटों में नहीं बँटता – जहाँ बहुदलीय पद्धति होती है वहाँ दलीय भावना प्रबल नहीं हो पाती और विभिन्न दलों के द्वारा कुछ सीमा तक पारस्परिक सहयोग का मार्ग अपनाया जा सकता है। अत: राष्ट्र दो विरोधी वर्गों में बँट जाने से बच जाता है।

व्यक्तित्व बनाये रखने का अवसर – यह व्यक्ति को कुछ सीमा तक अपना व्यक्तित्व बनाये रखने का अवसर देता है। यदि एक दल उनके विचारों के अनुकूल नहीं रहता, तो विशेष कठिनाई के बिना वह दूसरे दल को अपना सकता है।

बहुदलीय पद्धति के प्रमुख दोष निम्नवत् हैं-

1. शासन में अस्थिरता –कहीं शासन में साझीदार राजनीतिक दलों के हित परस्पर टकराते हैं, वहीं विवाद उत्पन्न हो जाता है जिसका परिणाम शासन का पतन होता है। बहुत जल्दी-जल्दी बदलने वाली ये सरकारें राजनीतिक अस्थिरता और भारी कठिनाइयों को जन्म देती हैं।

2. नीति की अनिश्चितता – सरकारों के शीघ्र परिवर्तन के कारण नीति की अनिश्चितता उत्पन्न होती है जिसका शासन के समस्त स्वरूप पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

3. शक्तिशाली विरोधी दल का अभाव –शक्तिशाली विरोधी दल के अभाव में जनहितों की अवहेलना की आशंका बनी रहती है।

4. कार्यपालिका की निर्बल स्थिति –प्रधानमन्त्री को हमेशा ही इन अलग-अलग राजनीतिक दलों को प्रसन्न रखना पड़ता है। ऐसी कार्यपालिका की स्थिति उत्तम नहीं होती है जिसके सिर पर सदैव अविश्वास प्रस्ताव की तलवार लटकी रहती हो।

5. कार्यकुशलता में कमी –राजनीतिक दलों के नेताओं का ध्यान सरकार तोड़ने, गठजोड़ करने तथा किसी भी प्रकार से सरकार बनाने की ओर रहता है। ऐसी स्थिति में प्रशासनिक कार्यकुशलता में बहुत अधिक कमी हो जाती है।

राज्य पार्टी बनने के लिए योग्यताएँ

i) उसे कम से कम पाँच वर्षों तक राजनीतिक गतिविधि में होना चाहिए।

ii) उसे आम चुनावों में चार प्रतिशत तथा राज्य चुनावों में तीन प्रतिशत स्थान प्राप्त हुआ होना चाहिए।

iii) इसके अलावा इसमें छह प्रतिशत वोटो का समर्थन होना चाहिए।

iv) किसी इकाई को राज्य पार्टी का दर्जा तब ही दिया जा सकता है भले ही वह लोकसभा में या विधानसभा में कोई स्थान नहीं प्राप्त किया हो यदि वह पूरे राज्य में डाले गए कुल मतों में से कम से कम आठ प्रतिशत जीत होनी चाहिए।

2020 में भारत में ऐसे 36 राज्य / क्षेत्रीय दल है जो अपने-अपने राज्यों का प्रतिनिधित्व करती है।

कुछ मान्यता प्राप्त दलों में आम आदमी पार्टी (आप), अखिल भारतीय अन्ना द्रविड मुन्नेन्न कझगम (ए.आई.ए. डी. एम. के. द्रविड़ मुन्नेत कझगम (डी.एम. के), बीजू जनता दल (बी. जे. डी), जनता दल (संयुक्त) (जे.डी.यू.) राष्ट्रीय जनता दल (आर. जे. डी), समाजवादी पार्टी (एस.पी.)।

पंजीकृत / गैर मान्यता प्राप्त दल

पंजीकृत दल वह दल होता है जिसे न तो राज्य माना जाता है और न ही राष्ट्रीय दल माना जाता है परन्तु उसका पंजीकरण निर्वाचन आयोग के पास होता है। इसे अपरिचित दल भी कहा जाता है। वर्तमान में भारत में 2000 से अधिक पंजीकृत दल हैं।

बडी ढीठ है चाहतों की चिरैया।
धरा तक नहीं ये गगन मांगती है।।
नहीं मिली किसी को राह चलते।
सफलता परिश्रम लगन मांगती है।।